चिश्ती परम्परा के हिन्दी सूफी कवि

अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय की
एम० फिल० उपाधि
हेतु प्रस्तुत

लघु शोध-प्रबन्ध

१९७७

निर्देशक :

डा० नज़ीर मुहम्मद
एम०ए० संस्कृत, एम०ए० (हिन्दी)
पी०एच०डी०, डी०लिट्०, रीडर हिन्दी विभाग,
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय

प्रस्तुत कर्ता :

अनसार अहमद सिद्दीकी
एम० ए० (हिन्दी)
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय

निवेदन

प्रस्तुत लघु प्रबंध में चिश्ती परम्परा के हिन्दी सूफी कवियों के सशक्त धाराओं का अध्ययन प्रस्तुत किया गया है । इस्लाम के आगमन के साथ भारत में सूफी-संतों का भी आगमन हुआ । इन सूफी संतों ने अपनी प्रेम भरी वाणियों से लोक मानस पर अधिकार प्राप्त करने का प्रयास किया । इन प्रयासों का फल है - हिन्दी/का सूफी प्रेमाख्यानक काव्य इसके साथ ही प्रेमाख्यानों की धारा संस्कृत, प्राकृत तथा अपभ्रंश साहित्य की प्रेरणा लेकर हिन्दी में शक्ति ग्रहण करती रही । हिन्दी साहित्य के मध्ययुग की यह धारा बीसवीं शताब्दी तक चलती रही ।

इसके उपरान्त इस्लाम सूफी साधक, सूफीमत और प्रेम मार्गी कवियों आदि विषयों पर विभिन्न दृष्टिकोण से स्वतंत्र अध्ययन प्रस्तुत हुए हैं । इसी दशा में मेरा प्रयास भी आपके समक्ष उपस्थित है । ईश्वर से प्रार्थना है कि अध्ययन की यह परम्परा सम्प्रति प्रगति पाती रहे ।

अन्तः साक्ष्य एवं अन्य साक्ष्य के आधार पर सत्य के निकट पहुँचने का प्रयास है, जिसमें विशेष त्रुटि न होगी ऐसी आशा है ।

अनसार अहमद सिद्दीकी

चिश्ती परम्परा के हिन्दी सूफी कवि

: प्रथम अध्याय :

चिश्तिया मत का आविर्भाव एवं विकास

चिश्ती परम्परा के हिन्दी सूफी कवियों पर विचार करने के लिये यह आवश्यक प्रतीत होता है कि सूफी मत पर पहले विचार किया जाये । सूफी मत को ही आधार मानकर सूफी कवियों ने प्रेम का वर्णन किया है । सूफी मत इस्लाम विश्वास प्रधान होता है । इस्लाम संसार के सामने केवल तौहीद (दृढ़ एकेश्वरवाद) का सिद्धान्त लेकर ही नहीं आया था प्रत्युत अख्लाके हसना (सदाचार-नैतिकता) का पाठ भी इस्लाम से मिलता है । जिसका दर्पण हजरत मोहम्मद साहब का व्यक्तित्व है । हजरत मुहम्मद साहब के जन्म के समय अरब देश समस्त प्रकार के पतनों में ग्रस्त था । यह मुहम्मद साहब का व्यक्तित्व एवं कुरआन की शिक्षाएँ ही थीं जिन्होंने अपने सदाचरण से इनका उद्धार किया ।

सूफी मत के विषय में प्राचीनतम उपलब्ध पुस्तक अबुनस्र-अल-सर्राज-अल-तूसी (मृत्यु 988 ई0) की अल्लुमा है । दूसरा ग्रन्थ अब्दुर्रहमान-अल-सुलमी (मृत्यु 1021 ई0) की तबक़ातुस्सूफिया है । अबुल कासिम-अल-कुशैरी (मृत्यु 1072ई0 ने सूफी मत के सिद्धान्तों एवं मुख्य सूफियों के विषय में अनेक पुस्तकों की रचना की । इन महानुभावों के दर्शाए हुए मार्ग पर चलकर अबूइस्माईल अब्दुल्लाह हरवी अन्सारी (मृत्यु 1089ई0) और हुजेवरी (मृत्यु 1089ई0) के बाद में सूफी मत के सिद्धान्तों एवं इतिहास पर कई पुस्तकें लिखीं । अब्दुल्लाह अन्सारी ने सुलमी का अनुकरण करते हुए " तबक़ातुस्सूफिया "नामक ग्रंथ की रचना फारसी भाषा में की । हुजेवरी ने अपने सुप्रसिद्ध ग्रन्थ "कश्फुलमहजूब" की सामग्री उस समय तक के समस्त उपलब्ध ग्रन्थों के आधार पर व्यवस्थित की और सुलमी, कुशैरी तथा अब्दुल्लाह अन्सारी की रचनाओं का विशेष रूप से उपयोग किया ।

इन सभी विद्वानों ने यह प्रमाणित करने का प्रयत्न किया है कि तसव्वुफ़ एक बहुत प्राचीन मत है और इसके प्रवर्तन का श्रेय हजरत मुहम्मद (मृत्यु 632ई0), उनके साथियों, सहयोगियों एवं उनके बाद में आने वाली संतानों महापुरुषों को प्राप्त है । सर्राज का कथन है कि सूफ़ी शब्द का प्रयोग इस्लाम के पूर्व भी आदरणीय व्यक्तियों के लिए किया जाता था । आमो जाति के ऐतिहासिक एवं संत मोटे ऊनी वस्त्र धारण करते थे । अरब की प्रथा है कि लोगों को संबोधित करने के लिए उन्हें उन वस्त्रों के अनुसार जो वे धारण करते हैं, पुकारा जाता है । कुरआन में हजरत ईसा के साथियों को "हवारीयून" कहने का कारण यह है कि वे सिर्फ वस्त्र धारण करते थे[1] । कुरआने के एक सूरः (अध्याय) में हजरत मुहम्मद को "हे कमली ओढ़ने वाले" कहकर संबोधित किया गया है[2] ।

कुरआन में ऐसे अनेक वाक्य हैं जिनकी व्याख्या द्वारा सूफ़ियों के मत की पुष्टि होती है । हज़रत मुहम्मद के जीवन की बहुत सी घटनाएँ और उनके बहुत से प्रवचन (हदीस) सूफ़ी सिध्दान्त की आधार भूत सामग्री बन गए हैं । हज़रत मुहम्मद के कुछ साथी (सहाबा) सदैव मस्जिद में ही निवास करते, इबादत में तल्लीन रहते थे और संसार से कोई मतलब न रखते थे । उन्हें जीवकोपार्जन की भी चिन्ता न थी । हज़रत मुहम्मद इनके जीवन से अत्यधिक प्रभावित थे । ये लोग "अहले सुफ़्फ़ा" कहलाते थे[3]। कुछ विद्वानों का मत है कि प्रारम्भिक सूफ़ी यही लोग थे[4] ।

632 ई0 में हजरत मुहम्मद के निधन के पश्चात् उनके प्रथम

1- अल-सर्राज:- किताब-अल-लुमा फ़ी अल-तसव्वुफ़ (लन्दन 1914), पृष्ठ 2 ।
2- सूरः मुजम्मिल, आयत 1 ।
3- मखदूम अली हुजवेरी, (दातागंज बख्श): कश्फ़ुल महजूब(लाहौर 1922ई0)पृष्ठ 63
4- मखदूम अली हुजवेरी, (दातागंज बख्श): कश्फ़ुल महजूब(लाहौर 1922ई0), 64 पृष्ठ 23 ।

उत्तराधिकारी (खलीफ़ा) हजरत अबूबक्र (632-634) हजरत मुहम्मद के प्रति निष्ठा एवं त्याग के लिए बड़े प्रसिद्ध है । सूफ़ियों के नक्शबन्दी सम्प्रदाय में आस्था रखने वालों का मत है कि उनके पंथ के प्रवर्तक हज़रत अबूबक्र थे । सूफ़ी हज़रत मुहम्मद के बाद के चारों खलीफ़ाओं का एक समान आदर करते हैं किन्तु अधिकांश सूफ़ी अपनी साधना का नेता हज़रत अली (656-660ई)को मानते हैं । जिन लोगों ने आध्यात्मिक रहस्यों का उद्घाटन किया उनमें हजरत अली सर्वश्रेष्ठ थे । वे सूफ़ी मार्ग (तरीक़त) के प्रथम प्रदर्शक थे । समस्त सूफ़ी उन्हें अपना शेख़ (गुरू) मानते हैं । सूफ़ी सिद्धांतों पर आधारित उनकी शिक्षा है :-

" अपने परिवार के अपनी चिन्ताओं का मुख्य विषय मत बनाओ यदि वे ईश्वर के मित्र हैं तो वह स्वयं उनकी देखभाल करेगा, यदि वे उसके शत्रु हैं तो तुम ईश्वर के शत्रुओं की चिन्ता क्यों करो?"

हज़रत अली की सन्तान में उनके दोनों पुत्रों हजरत हसन (मृत्यु 669 ई0) और हज़रत हुसैन (मृत्यु 680 ई0), हज़रत हुसैन के पुत्र ज़ैनुल-आबदीन, हज़रत ज़ैनुलआबदीन के पुत्र मुहम्मद अल-बाक़िर और इनके पुत्र हज़रत जाफ़रे सादिक़ (मृत्यु 765 ई0) को सूफ़ी लोग अपना आध्यात्मिक पथ प्रदर्शक मानते हैं । कहा जाता है कि हज़रत जाफ़रे सादिक ने सभी सिध्दान्तों का निरूपण करते हुए अनेक ग्रन्थों की रचना की थी ।

जो सूफ़ी अपना सम्बन्ध हज़रत अली से जोड़ते हैं उनके बीच की मुख्य कड़ी हसन बसरी (मृत्यु 728 ई0) है । वे अपने समय के बहुत बड़े विद्वान एवं सम्मानित व्यक्ति थे । हज़रत मुहम्मद के एक मुख्य सहाबी(साथी) अबूहुरैरा-गफ़्फ़ारी को भी सूफ़ियों में बड़ा सम्मान प्राप्त है ।

यद्यपि इस्लाम के प्रथम 200 वर्षों में अनेक ऐसे त्यागी, विरक्त

1- पहले खलीफ़ा हज़रत अबूबक्र(632-634ई0), हज़रत उमर(634-644ई0), हज़रत उसमान (644-656ई0), अन्तिम खलीफ़ा हजरत अली (656-661ई0) ।

2- अबूल मजदूब पृष्ठ- 55 ।

एवं तपस्वी व्यक्ति त हुए हैं जिन्होंने इस्लाम के हृदय-पक्ष और हृदयवाद को अपनी साधना द्वारा सबल बनाया है किन्तु " सूफी " शब्द का प्रयोग उनके लिए नहीं किया जाता था । इस आन्दोलन को प्रसिद्धि आठवीं सदी के अन्त में ही प्राप्त हुई । अब्दुल्लाह इब्नो अम्मारी के मतानुसार सर्वप्रथम जो महात्मा सूफी के नाम से विख्यात हुए, वे कूफे के निवासी हजरत हाशिम थे । वे 777 ई० तक जीवित रहे[1] । फिर क्या कारण है कि इस्लाम के प्रथम दो सौ वर्षों के महात्माओं को सूफी नहीं कहा जाता था, इसका उत्तर इमाम कुशैरी ने इस प्रकार दिया है :-

" हजरत मुहम्मद के बाद मुसलमानों के लिए सहाबा(साथी) के अतिरिक्त कोई अन्य उपाधि श्रेष्ठ नहीं हो सकती थी । हजरत मुहम्मद के साथी होने का श्रेय इतना अधिक था कि इससे बड़े सम्मान की कल्पना नहीं की जा सकती थी । सहाबा के साथी ताबिईन कहलाए, उनके बाद के लोग तबए-ताबेईन की उपाधि द्वारा विख्यात हुए । बाद में अन्य श्रेणियों के लोग होने लगे । जिन महापुरुषों का ध्यान धर्म की ओर अधिक होता था उनको जाहिद (संयमी) और आबिद (तपस्वी) कहा जाता था । जब इस्लाम में नए-नए मार्ग निकलने लगे और विभिन्न समूह उत्पन्न होने लगे तो हर समूह वाला यही दावा करता था कि संयमी पुरुष उनमें ही जन्म लेते हैं । अतः सूफियों में सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति तसव्वुफ के नाम से विख्यात हुए और दूसरी सदी (हिजरी) से पूर्व ये बुजुर्ग इस नाम से प्रसिद्ध हुए[2] "।

खलीफा हारून रशीद और मामून रशीद के समय तक यूनानी दार्शनिकों के साहित्य का बहुत बड़ा भण्डार अरबी में अनुदित हो गया था । इसके आधार पर मुसलमान दार्शनिकों ने मौलिक ग्रन्थों की रचना की । वे फैलसूफ अथवा फिलासफ (बुद्धिजीवी) कहे जाते हैं । इन लोगों ने गम्भीर अध्ययन द्वारा अफलातून एवं अरस्तू से प्रेरणा प्राप्त की । अरस्तू का प्रभाव फिलासफ पर सीधा पड़ा किन्तु अफलातून का नव अफलातूनी द्वारा । इनके आधार पर फिलासफ जगत को दो भागों में विभक्त करने लगे । एक वह जगत

1- तबकातुस्सूफिया : (जाबुल, मेहरान 1341 शम्सी) पृष्ठ 7 ।
2- इमाम कुशैरी : अल रिसालतुल कुशैरिया : (मिस्र 1346 हि० / 1928 ई०) पृष्ठ 7,8 ।

जिनका इन्द्रियों आभास कर सकती हैं, दूसरे वह जगत जिसका सम्बन्ध केवल बुद्धि अथवा चित्त से है । फिलासफ़ ने विचारों एवं बुद्धि के जगत विषय में यह मत स्थापित किया कि उसका प्रभुत्व दिव्यलोक पर है । मसऊदी नामक इतिहासकार का यह अ मत है कि अफलातून के समर्थक जिस समस्याओं का अध्ययन करते थे उनमें से एक यह थी कि जीवात्मा शरीर में है अथवा शरीर जीवात्मा में [1] । जीवात्मा को सूफ़ियों ने भी अपने तर्क-वितर्क का मुख्य विषय बनाया । फिलासफ़ ने बुद्धि और ज्ञान का सहारा लिया, सूफ़ियों ने प्रेम और प्रीति के मार्ग को अपनाया ।

अब्बासी राज्यकाल के प्रारम्भ में सुन्नी धर्म विधान का क्रम बद्ध प्रतिपादन चार मुख्य विद्वानों ने किया :-

1- इमाम अबूहनीफ़ा (मृत्यु 767 ई0) का मुख्य कार्य-क्षेत्र कूफ़ा और बगदाद था ।
2- इमाम मालिक बिन अनस (मृत्यु 795 ई0) का मुख्य कार्य क्षेत्र मदीने में था ।
3- इमाम शाफ़ई (मृत्यु 820ई0) यह इमाम मालिक के शिष्य थे आधुनिक बंगलादेश तथा इण्डोनेशिया में इनके धर्म विधान को बड़ी मान्यता प्राप्त है ।
4- इमाम इब्ने हंबल (मृत्यु 855 ई0) का कार्य क्षेत्र बगदाद था । इनके अनुयायी क्रमशः हनफ़ी, मालिकी, शाफ़ई एवं हंबली कहलाते हैं । यद्यपि मक्का, मदीना इस्लाम के धार्मिक केन्द्र बने रहे किन्तु इस्लाम के सांस्कृतिक, बौद्धिक और धार्मिक आन्दोलनों का विकास बसरा, कूफ़ा, दमिश्क, बगदाद, काहिरा और अन्दुलुस में हुआ ।

इन त्यागियों, तपस्वियों और ईश्वर के प्रेमियों के जीवन की अनेक घटनाओं के आधार पर तसव्वुफ़ के उच्चकोटि के रहस्यवाद का अविर्भाव हुआ । संसार से विरक्त ईश्वर के ध्यान में मग्न इन सूफ़ियों को बाद के सभी सूफ़ियों ने श्रद्धाञ्जलि अर्पित की है और उन्हें अपना पथ-प्रदर्शक माना है । सूफ़ियों तथा इनके बाद के महापुरुषों के जीवन एवं कथनों के आधार पर तसव्वुफ़ की विभिन्न परिभाषाएँ तैयार हुई । दसवीं सदी ई0 के पूर्व के जो सूफ़ियों की जीवनियों के ग्रन्थ हमें उपलब्ध हैं, उनके अध्ययन से पता चलता है कि हर सूफ़ी तसव्वुफ़ की परिभाषा अलग ही देता है । इनके अनुसार कोई तो

1- मकुनुज़हब, (पेरिस) भाग 4, पृष्ठ 65 ।

तसव्वुफ़ के त्याग एवं तपस्या वाला है, कोई रहस्यवादी धार्मिक विश्वास और कोई नैतिकता ।

सूफ़ी ख़ानक़ाह का सर्वप्रथम निर्माण एक ईसाई हाकिम ने रमला (सीरिया) में कराया । शेख़ अब्दुल्लाह अंसारी ने विश्वस्त सूत्रों के आधार पर बताया है कि इसका कारण यह था कि एक दिन एक ईसाई हाकिम शिकार खेलने गया था मार्ग में उसे दो सूफ़ी मिले । उन्होंने एक दूसरे के प्रति अत्यधिक निष्ठा का प्रदर्शन किया । दोनों ने एक साथ भोजन किया और चल बहुँ हुए ईसाई हाकिम ने इस दृश्य से प्रभावित होकर उनमें से एक को बुलाकर दूसरे के विषय में पूछा, किन्तु उनसे अज्ञानता प्रदर्शित करते हुए बताया कि हम लोगों में इसी प्रकार मिलने जुलने की प्रथा प्रचलित है । जब हाकिम को ज्ञात हुआ कि इन लोगों के पास कोई ऐसा स्थान नहीं जहाँ वे एक दूसरे से मिल सकें तो उसने रमला में (सीरिया) में ख़ानक़ाह का निर्माण कराया[1]। इस प्रकार इसमें कोई सन्देह नहीं रह जाता कि प्रथम सूफ़ी ख़ानक़ाह इसाई ईसाईयों के मठ के आधार पर जो बौद्ध विहारों से प्रभावित थे, बनी ।

ग्यारहवीं सदी ई० में ख़ानक़ाहों का पूर्ण विकास हुआ इसके कारण विभिन्न सूफ़ी संघों के सिद्धान्तों में किसी सीमा तक एक समता आ गई । ख़ानक़ाह के अनुशासन का पालन करने की प्रवृत्ति ने सूफ़ियों के संगठन को दृढ़ कर दिया । ख़ानक़ाह में केवल मुर्शिद (मुक़द्दम) के बताए गए नियमों का पालन होता था । उसे इस विशिष्ट सूफ़ी सम्प्रदाय का पूर्ण ज्ञाता समझा जाता था और उसकी आज्ञा का उल्लंघन सम्भव न था । शेख़ अबू सईद अबुलख़ैर ने अपनी ख़ानक़ाह वालों के लिए निम्नलिखित दस नियमों का पालन अनिवार्य बना दिया था :-

1- सूफ़ियों को अपने वस्त्र साफ़ रखने होंगे और अपने मन को शुद्ध रखना होगा ।
2- किसी सूफ़ी को मस्जिद अथवा किसी अन्य पवित्र स्थान पर पग लहराने के लिए न बैठना चाहिए ।
3- सूफ़ी लोग मिलकर इबादत करेंगे ।
4- सूफ़ी रात्रि में अधिक इबादत करेंगे ।
5- प्रातःकाल सूफ़ी लोग ईश्वर से क्षमायाचना करेंगे और उसका स्मरण करेंगे ।
6- प्रातःकाल प्रत्येक सूफ़ी जितना अधिक कुरआन का पाठ कर सकता है करे कर्तव्य

1- अब्दुल्लाह अंसारी, पृष्ठ 12 ।

के पूर्व किसी से बातचीत न करनी चाहिए ।

7- सायंकाल की नमाज और सोने की नमाज के मध्य में जिक्र (गुप्त-स्मरण) करना चाहिए ।

8- प्रत्येक दरिद्र याचक एवं नव आगन्तुक का स्वागत करना होगा और उसकी सेवा में जो भी कष्ट हो उसे सहर्ष भोगना पड़ेगा ।

9- कोई सूफी अकेले भोजन नहीं करेगा । सब मिलकर भोजन करेंगे ।

10- बिना एकदूसरे से आज्ञा लिए खानकाह से अनुपस्थित न रहेंगे[1] ।

शेख अबूसईद अबुलखैर का जन्म 967 ई0 में खुरासान के मैहान नामक स्थान पर हुआ उन्होंने बायज़ीद और हल्लाज के सिध्दान्तों की स्पष्ट व्याख्या की । उन्होंने फारसी रुबाई की चार चार पंक्तियों में रहस्यवादी विचार बड़े मार्मिक ढंग से अभिव्यक्त किए । अबूसईद की प्रतिभा एवं संगठन शक्ति ने बायज़ीद और हल्लाज के सिध्दान्तों को सूफी मत का अभिन्न अंग बना दिया । शेख अबूसईद का निधन 1049 ई0 में हुआ ।

कालान्तर सूफीमत पर इस्लाम से बाहरी बातों का प्रभाव पड़ने लगा था इसमें लोक, वायवीयवाद तथा नास्तिक मत को प्रवेश दिलाने का श्रेय जुननून मिस्री को दिया जाता है । बायज़ीद के अनुयायी सूफियों में पृथक्करण की प्रवृत्ति जागृत हुई और वे सर्वात्मवादी सिध्दान्त के पोषक बन गए । इस सम्प्रदाय में सर्वाधिक प्रसिध्द हुसैन मंसूर हैं जिन्हें हल्लाज कहने की परम्परा है । हुसैन ईरानी था और मंसूर उसके पिता का नाम था । उसके अनुसार मुहम्मद नबियों में सर्वश्रेष्ठ हैं । उसका "अनलहक़" का सिध्दान्त विशेष रूप से उल्लेखनीय है

ग्यारहवीं से तेरहवीं शताब्दी तक का समय मुस्लिम पुनरोत्थान का युग था, जब कि ज्ञान-विज्ञान के प्रायः सभी क्षेत्रों में पुनर्विचार और नये - निर्माण का कार्य जारी था जिसका एक परिणाम कला और साहित्य के क्षेत्र में लक्षित हुआ । इस कारण सूफीमत के लिए यह क्लासिक युग कहलाकर प्रसिद्ध हुआ। इसी युग में फरीदुद्दीन अत्तार(मृत्यु 1287 ई0), जलालुद्दीन रूमी (मृत्यु 1330ई0) और शेख सादी (मृत्यु 1149 ई0) जैसे तीन रहस्यवादी ईरान में उत्पन्न हुए । इन तीनों की रचनाओं का सूफी जगत पर बड़ा व्यापक प्रभाव पड़ा ।

सूफीमत के विकास का अन्तिम चरण हाफिज़(मृत्यु 1447ई0) और

1- इस्लाम के सूफी साधक (अनुवादक श्री नर्मदेश्वर चतुर्वेदी, इलाहाबाद) : रेनाल्ड-ए0 निकलसन (लिस्टन 1967) पेज 46 ।

जामी (मृत्यु 1549 ई०) के साथ पूरा होता है । इसी काल की अ० महमूद शबिस्तरी की रचना " गुलशने राज" है जो वास्तव में सूफीमत के पारिभाषिक शब्दों का प्रश्नोत्तर के रूप में सारांश मात्र है ।

इन प्रतिभाशाली कवियों के द्वारा फारसी साहित्य की अभिवृद्धि के साथ सूफीमत का भी प्रचार हुआ । सूफीमत की उपदेशात्मक बातों को काव्य का परिधान देकर उसे आकर्षक स्वरूप प्रदान किया जिससे उनकी पहुँच सर्व-साधारण तक सम्भव हो सकी । इस काव्य रचनाओं के द्वारा सूफीमत में सरसता का संचार हुआ और इसका पूर्व वैराग्यमय स्वरूप विस्मृत होकर उसका स्थान प्रेम और विरह ने ले लिया । इस प्रेम और विरह के प्रतीकों के आधार पर "प्रेमाख्यानक" हुई । फारसी काव्यों के इस आदर्श का प्रभाव क्रमशः अन्य भाषाओं एवं देशों पर भी पड़ा । भारतीय सूफियों ने तो इस ढंग पर काव्यमयी सूफी भावधारा से समन्वित रचना करके हिन्दी साहित्य की प्रेमाख्यान परम्परा में अपना विशिष्ट स्थान बना लिया है ।

<u>भारत में इस्लाम तथा विशेषतया शब्द की व्युत्पत्ति एवं मूल्य अर्थ</u>

अरब देश तीन ओर से समुद्र द्वारा घिरा हुआ है । भोजन तथा खाद्य सामग्री पर्याप्त न होने के कारण अरब ने प्रारम्भ से ही व्यापार की ओर अधिक ध्यान दिया । अरब के व्यापारिक मार्ग से ही मिस्र और शाम के देशों का व्यापार होता था । अरबों का भारत से व्यापारिक सम्बन्ध बड़ा प्राचीन है । बौद्ध जातक कथाओं में इस विषय के संकेत मिलते हैं । हजरत यूसुफ के समय से लेकर मार्कोपोलो और वास्कोडिगामा के समय तक भारतीय व्यापारिक मार्ग अरबों के अधीन थे [1] ।

भारत में आगमन के पूर्व द्रविड़ जाति में शक्ति भावना का अस्तित्व प्रधान था । आर्यों के बुद्धिवाद के साथ शक्ति भाव का मिश्रण हुआ जिससे विचार अत्यन्त उन्नत और उदार हो चले । इसी कारण यह सम्भव हो सका कि नवीन जातियाँ और विचार वाले लोग जो समय समय पर भारत आए यहाँ की सभ्यता, संस्कृति और धर्म द्वारा प्रभावित होकर इसी में लीन हो गये । उपनिषदों के प्रादुर्भाव काल में यज्ञ तथा अन्य दूसरे कृत्यों के बाहुल्य रहस्यवाद का जन्म हुआ । यह रहस्यभावना जो शक्ति और प्रेम से समन्वित थी धीरे धीरे साधारण के विचारों

1- जायसी के परिवर्ती हिन्दी सूफी कवि और काव्य पृष्ठ 17

पर अपना प्रभाव डालने लगी । प्रेम और भक्ति की यह भावना इतनी गहरी थी कि बौद्धिक दर्शन जो बुद्धिवाद का फल था प्रेम और भक्ति से प्रभावित हो चला किन्तु कुछ संस्कृतियाँ ऐसी प्रबल भी रही हैं जिनके चिह्न स्पष्ट उभरे हुए दिखाई देते हैं ।

इस बात को दृष्टि में रखते हुए कतिपय विद्वानों का यह मत है कि भारतीय संस्कृति की यह विशेषता है कि उसमें सदैव से ही समुद्र की भाँति सोखने की अद्भुत शक्ति रही है । जिसका मूल कारण - सहनशीलता, समन्वयात्मकता, उदारता, लचीलापन तथा पाचन शक्ति आदि गुण हैं । समाज शास्त्र का यह एक सामान्य सिद्धान्त है कि जब जब दो महान संस्कृतियों का घनिष्ठ संपर्क होता है तब तब उसके परिणाम स्वरूप आदान प्रदान की प्रक्रिया भी महान रूप से हुआ करती है ।

धर्म और दर्शन ऐसे तथ्यात्मक विषय हैं जिनका साहित्य में क्रमबद्ध रूप में शास्त्रीय एवं विस्तृत विवरण प्राप्त होना अधिक सम्भव नहीं होता, फिर भी मध्य कालीन हिन्दी साहित्य क्योंकि धर्म प्रधान है तथा भारत का इस्लाम से मुस्लिमों, शासकों तथा मुस्लिम देशों के व्यापारियों, पर्यटकों आदि के द्वारा दीर्घकालीन घनिष्ठ सम्पर्क रहा है । इसलिए हिन्दी साहित्य में भारतीय धर्म-दर्शन के साथ-साथ इस्लाम धर्म एवं तसव्वुफ (दर्शन) का भी अच्छा खासा परिचय प्राप्त हो जाता है । यहाँ नवोन्मेषक साधक सर्वप्रथम पंजाब एवं सिंध में आए ।

मखदूम सैय्यद अली - अलहुजवेरी दाता गंज बख्श के नाम से जनसाधारण में प्रसिद्ध थे । इनका निवास स्थान जुलाब और हुजवेर गजनी के पास था अतः लोग उन्हें अलजुलाबी भी कहकर पुकारते थे । इन्होंने अपने जीवन काल में अनेक देशों का भ्रमण किया और अन्त में पंजाब में आकर प्रचार कार्य प्रारम्भ किया । बट्टी दरवाजा लाहौर में इनकी कब्र पर अनेक हिन्दू तथा मुसलमान पूजा करने आते हैं । इनकी मृत्यु 1072 ई० में हुई थी । अलहुजवेरी द्वारा रचित ग्रन्थ " कश्फुल महजूब" के नाम से प्रसिद्ध है । जनसाधारण के विश्वासानुसार सूफीमत के ये प्रथम आचार्य हैं जो भारत आए ।

"कश्फुल महजूब" में इनका कथन है कि साधक को लगभग तीन साल तक गुरु के पास उनके संरक्षण में रहना चाहिए । प्रथम वर्ष में उसे अहंकार से छुटकारा पाकर मानवता की सेवा करनी चाहिए और द्वितीय वर्ष में उसे अपने सारे कार्यों को ईश्वरोन्मुख कर देना चाहिए और अन्तिम वर्ष में

[illegible] का प्रयत्न करना चाहिए । हुजवेरी के अनुसार दरिद्रता में जीवन व्यतीत करने का अर्थ है सांसारिक क्रियाओं में लिप्सा का सर्वथा त्याग करना, निश्चय छोड़कर साधना को ही हुजवेरी "फना" कहते हैं । फना की ओर अग्रसर होने की व्यवस्था को वेदान्त भी कहते हैं ।

यद्यपि अलहुजवेरी ने अपने ग्रन्थ में बारह सूफी सम्प्रदायों का उल्लेख किया है किन्तु भारत में निम्न चार या छः सम्प्रदाय प्रसिद्ध हैं :-

1- चिश्ती शिष्य सम्प्रदाय 2- सुहरावर्दिया सम्प्रदाय 3- कादिरिया सम्प्रदाय
4- नक्शबंदिया सम्प्रदाय ।

<u>सुहरावर्दिया सम्प्रदाय :-</u> भारत में इस सम्प्रदाय का इतिहास शहाबउद्दीन सुहरावर्दी के भतीजे से आरम्भ होता है । बहाउद्दीन जकरिया मुल्तानी ने ही इस सम्प्रदाय की नींव गहरी कर डाली थी । ये शहाबउद्दीन के शिष्य थे । सुहरावर्दी सम्प्रदाय के अन्तर्गत दो कई शाखाएँ हो गईं । इनमें प्रधान विशेषता यह थी कि इन्होंने अपने सम्प्रदाय को नियमबद्ध तथा सरलार्थ एवं को उपयुक्त धारणा के विपरीत बनाने की चेष्टा की, इसी कारण ये सौम्य मतावलम्बी (निम्नकोटि) कहलाए तथा उनका वर्गीकरण दो मतवादों (वैदूय) एवं वैराग्य (अवैद्य) के रूपों द्वारा किया गया ।

प्रधानतः सुहरावर्दियों के अन्तर्गत एवं प्रथम मतवादी शाखा आती है । सैयद अब्दुल्लाह सुहरावर्दी " शाहमीर" (मृत्यु 1192 ई0) मुख्यतः निजामी ने निर्दोष इस विचार धारा का स्रोत प्रवाहित किया । ये बहाउद्दीन जकरिया के शिष्य थे । इनका ध्यान केन्द्र सिंध ही रहा । इनके पौत्र मुहम्मद कबीर (मृत्यु- 1384 ई0) भी प्रसिद्ध साधक थे । ये मखदूम जहानियाँ के नाम से भी प्रसिद्ध रहे हैं। मखदूम जहानियाँ ने अपनी एक " मखदूमी शाखा " चलाई थी । इसी प्रकार सुहरावर्दी के सैयद मीरान मुहम्मद शाह ने " मीरान शाही" मीरान शाखा को जन्म दिया । इन्होंने अकबर द्वारा सम्मान भी पाया था । जकरिया की चौदहवीं पीढ़ी के शाहिल मुहम्मद इस्माईल (मृत्यु 1940 ई0) ने " इस्माईल शाही" को जन्म दिया । इस शाखा के सैयद शाहीर के नाम साथ जाते हैं, जकरिया की सातवीं पीढ़ी के दौलत शाह ने अपने नाम पर " दौलतशाही" शाखा चलाई जिसका अकबर काल में बोलबाला ही रहा । सारा सुहरावर्दियों की इन सभी शाखाओं ने अपने को प्रतिष्ठित वेद कुरान से ही चलाने की चेष्टा की है ।

सुहर्द की

बेहरा सुहर्वर्दी की दो प्रधान शाखाएँ हैं — " लाल शाह बाजिद" तथा "रसूलशाही" लालशाह बाजिदा शाखा के बहाउद्दीन जकरिया के शिष्य लाल शाहबाज ने चलाया था। ये स्वतंत्र विचार वाले व्यक्ति थे और इस्लाम धर्म के मूल मान्यताओं को भी विशेष महत्व नहीं देते थे।

रसूलशाही की स्थापना अलवर के एक रसूलशाह नामक व्यक्ति ने की थी जो शेख निजामतुल्लाह के शिष्य थे। रसूलशाही सिर पर लाल व सफेद रूमाल बाँधते हैं। इस शाखा में मूसा सुहाग (मृत्यु 1449ई0) नामक साधक थे जिन्होंने " हुदाभिया" शाखा को जन्म दिया जिनका प्रचार क्षेत्र अहमदाबाद के आसपास था।

कादिरिया :— भारत में इस सम्प्रदाय का प्रवेश इसके मूल प्रवर्तक शेख अब्दुल - कादिर जीलानी (मृत्यु 1134-1223 ई0) कहे जाते हैं जो बगदाद के निवासी थे भारत में इनके प्रथम प्रचारक सैय्यद फन्दगी मुहम्मद गौस थे जो शेख जिलानी की दसवीं पीढ़ी में थे। भ्रमण करते हुए भारत आए तथा अपना निवास स्थान सिन्ध में उच्च नामक स्थान को चुना। ये एक वीर योग्य व्यक्ति एवं कवि थे और कश्मीर प्रदेश में आज तक एक प्रधान संत के रूप में पूजे जाते हैं। इनके शिष्य " मियाँमीर"(सन् 1550-1635ई0) एक प्रसिद्ध साधक थे। जिनके शिष्य मुल्लाहशाह ने इस मत का प्रचार कश्मीर प्रदेश में किया। बंगाल व बिहार में भी इस सम्प्रदाय का प्रसार हुआ। मियाँमीर के शिष्य मुल्लाशाह का शाहजादा दाराशिकोह मुरीद था। दाराशिकोह ने मियाँमीर की एक जीवनी "सकीनतुल-औलिया" नाम की लिखी है जिसमें उसने मियाँमीर को महान त्यागी एवं तपस्वी सिद्ध किया है।

नक्शबन्दिया :— सूफी सम्प्रदाय की नक्शबन्दिया शाखा के मूल प्रवर्तक ख्वाजा-बहाउद्दीन नक्शबन्द थे। जो तुर्किस्तान के निवासी थे इन का देहान्त सं0 1446ई0 ईशाम में हुआ था। इनकी सातवीं पीढ़ी में ख्वाजा बाकी बिल्लाह बेरंग (मृत्यु सन् 1660 हुए, जिन्होंने नक्शबन्दी सम्प्रदाय का प्रचार भारत में किया किन्तु कुछ विद्वान भारतीय प्रचारकों में सर्वाधिक श्रेय शेख अहमद फारूकी " सरहिन्दी" को देते हैं। इन्होंने सुन्नी मत का समर्थन किया था इनकी मृत्यु सं0 1682 हुई। औरंगजेब इनके पुत्र शेख मासूम के मुरीद थे

शेख अहमद फारूकी ("सरहिन्दी" की सुधार भावना ने कुछ दिनों के लिए संगीत, नृत्य, सफ्टांग, संयमत आदि अनेक प्रकार के बाह्य प्रदर्शनों का अन्त कर दिया। इन्होंने सूफियों की " कुबुरिया" एवं " सुहरिया" शाखा में भी

मतैक्य स्थापित करना चाहा और सिद्ध कियाकि प्रारम्भ में सभी वजूदिया होते हैं क्योंकि वे परमात्मा तथा सृष्टि में सम्यक भेद नहीं कर पाते किन्तु क्रमशः आध्यात्मिक विकास हो जाने पर वे इन दोनों का भेद भली-भाँति समझ कर अद्वैतिया हो जाते हैं ।

चिश्त नामः चिश्त खुरासान के एक प्रसिद्ध नगर का नाम है । वहाँ कुछ सूफियों ने आध्यात्मिक सुधार का एक बड़ा केन्द्र स्थापित किया इसको बड़ी प्रसिद्धि प्राप्त हुई और वह सूफी इस केन्द्र के नाम से चिश्तिया सम्प्रदाय कहलाने लगा । खिजरतुल-अनवार में लिखा है —

" चिश्त नाम के दो स्थान हैं एक नगर खुरासान में हेरात के निकट स्थापित है । दूसरा चिश्त भारत में उच्च और मुल्तान के बीच एक कस्बा है । वास्तव में चिश्त सम्प्रदाय खुरासान वाले चिश्त से सम्बन्ध रखते हैं[1] ।"

सैय्यद अलाउद्दीन उदहो मामुकोमा में फरमाते हैं ——

" अगर हम भारत आए तो इसमें
हम तो खुरासान के बगीचे के सब्जे हैं [2] ।"

सूफी ख्वाजा अबुल इसहाक शामी (अलमतौफ्फे 940ई0) सूफी हैं जिनके नाम के साथ चिश्ती लिखा मिलता है । खेद है कि उनके सम्बन्ध में विस्तार पूर्वक कहीं नहीं मिलता । सियरूल औलिया में उनके सम्बन्ध में केवल कुछ लाइन लिखी गई हैं । बाद की पुस्तकों" मराजुल असरार" ,"खजरतुल अनवार" आदि में जो विस्तार से लिखा गया है वह भी किसी प्रकार से उनकी सम्पूर्ण महानता को प्रकाशित नहीं करती । एक महान आध्यात्मिक सम्प्रदाय का यह प्रवर्तक सिद्धि व अलौकिक की किन सलाहियतों का मालिक था उनका कोई अनुमान इन पुस्तकों से नहीं होता ।

कहा जाता है कि सूफी ख्वाजा अबूइसहाक शाम के रहने वाले थे । अपने देश से चलकर बगदाद आए और ख्वाजा मुम्शाद-अल-दीनौरी की सेवा में उपस्थित हुए ख्वाजा दीनौरी (अलमतौफ्फे 910ई0) प्रथम समय के महान सूफियों में थे । दूर दूर से लोग आकर उनकी सेवा में हाजिर होते थे । उनके सम्बन्ध में सूफी ख्वाजा फरीदउद्दीन अत्तार ने " तजकरतुलऔलिया[3]" और मौलाना अब्दुर्रहमान जामी ने"नफहातुल अन्स[4]" में लिखा है । सूफी ख्वाजा अत्तार का कथन है कि सूफी दीनौरी

1- खिजरतुल-अनवार — फखरूद्दीन देहलवी(1281 हि0) ।
2- मामुकोमा — सैय्यद अलाउद्दीन औदी ।
3- तजकरतुल औलिया (अब्दुर्रहमान अमृतसरी उर्दू अनुवाद । पृष्ठ 383-384 ।
4- नफहातुल अन्स (बम्बई 1284 हि0) पृष्ठ 60-62 ।

खानकाह(मठ) का दरवाजा अधिकतर बन्द रखते थे । जब कोई आता तो पूछते कि पथिक हो या अपथिक फिर कहते अगर अपथिक हो तो हम खानकाह में आ जाओ और अगर पथिक हो तो यह खानकाह तुम्हारी जगह नहीं है । इसलिए कि जब तुम कुछ दिन यहाँ रहोगे और मुझे तुम से सम्बन्ध हो जाने पर जाना चाहोगे जिससे मुझ करने को मुझे मैं शक्ति नहीं ।

जब सूफी आचार्य अबुसईद इनकी खानकाह (मठ) में उपस्थित हुए तो पूछा कि तुम्हारा क्या नाम है । उन्होंने अबुसईद आपको कहा । सूफी आचार्य शानौरी ने कहा —" क्या आप ये लोग मुझे अबुसईद जिन्दी कह कर पुकारेंगे"

इसके पश्चात सूफी आचार्य शानौरी ने इनको जिन्दी कहे जाने के लिए कहा जहाँ इनके प्रयास से एक महान सम्प्रदाय की स्थापना हुई और जिन्दी कुछ ही दिनों पश्चात एक महान आध्यात्मिक सम्प्रदाय का केन्द्र बन कर चमक उठा ।

सूफी आचार्य अबुसईद अधिकतर बिना खान-पान के जीवन व्यतीत करते थे और इस पर गर्व करते थे । एक दिन अपने शिष्य सूफी आचार्य अबु-अहमद जिन्दी से कहने लगे—" ऐ अबु अहमद! दरवेशी (सूफी) सम्पूर्ण संसार की बादशाही से भी बढ़कर है अगर अबुसईद की ऐसा सुलेमान भी है तो ईश्वर को कदम वह कबूल नहीं करेंगे"।

<u>जिन्दी परम्परा</u> :- अनेक सूफी सम्प्रदायों की तरह जिन्दी सम्प्रदाय की इजरत अली से ही प्रारम्भ होता है जिनकी शृंखला सूची निम्नलिखित है :-

इजरत अली
|
इमाम बसरी
|
अबुसईद अब्दुल वाहिद बेद
|
अबीफिल फेजई अयाज
|
इब्राहीम अदहम अलबल्खी
|
अबीद उबुदीन हुजैफतुल मरअशी
|
अमीनउद्दीन अबी हैबरत-इल-बसरी
|
मुमशाद अली दीनौरी
|
अबु इसहाक शामी चिश्ती
|
अबु अहमद इब्न फरसनाकुअबदल चिश्ती
|
अबु अहमद इब्न अहमद चिश्ती
|

अबू मौदूद चिश्ती
|
हाजी शरीफ जिन्दानी
|
उसमान हरवनी
|
मोईनउद्दीन चिश्ती हसन सजरी[1]

अमामी ने " फतुहुल सलातीन " में इन सूफियों को इसी प्रकार कहा है । फतुहुल सलातीन भारत के धार्मिक और साहित्य में प्रथम पुस्तक है जिसमें चिश्ती सम्प्रदाय की सूची है ।

चिश्तिया मत के उद्भव सम्बन्धी विभिन्न विचार :- भारत में सूफीमत का प्रवेश हुजवेरी के आगमन के साथ हुआ । वह अफगानिस्तान के गजनी के रहने वाले थे । उन्होंने तुर्किस्तान तथा सीरिया की यात्रा की, अन्त में आकर लाहौर में रहने लगे । यहीं इनकी मृत्यु 1026 ई0 में हुई। पर सूफीमत का भारत में चिश्ती सम्प्रदाय का क्रमबद्ध इतिहास ख्वाजा मुईनउद्दीन चिश्ती से प्रारम्भ होता है । ख्वाजा मुईनउद्दीन चिश्ती का जन्म 1141-42 ई0 के लगभग सिजिस्तान (खुरासान) में हुआ । जब वे 15 वर्ष के हुए उनके पिता का देहावसान हो गया । एक बाग और एक पनचक्की पिता ने सम्पत्ति के रूप में छोड़ी थी उसी से उनका जीवन निर्वाह होता था । कुछ वर्ष उपरान्त वे सब कुछ छोड़ (त्याग) समरकन्द और बुखारा के चक्कर लगाते रहे । फिर नीशापुर पहुँचकर हरवत के शेख उसमान चिश्ती से दीक्षा प्राप्त की और घोर तपस्या और गुरू की सेवा करते रहे । शेख अब्दुल हक मुहद्दिस देहलवी के अनुसार 20 वर्ष तक शेख उसमान हरवनी की सेवा करने के उपरान्त हमदान, तबरेज, खिर्कान, अस्तराबाद, हिरात, सब्जवार, बिसार, सामदान, बल्ख, बगदाद, गजनी इत्यादि की यात्रा करते हुए लाहौर पहुँचे । प्रत्येक स्थान पर वहाँ के प्रसिद्ध सूफियों के मजार पर कई-कई वर्षतक इबादत (तपस्या) में तल्लीन रहते । जहाँ कहीं भी अधिक प्रसिद्ध प्राप्त होने लगती और उनकी इबादत में बाधा एवं ध्यान में विघ्न पड़ने लगता, वे उस स्थान से दूसरे स्थान चले जाते । लाहौर में हुजवेरी के मजार (समाधि) पर भी तपस्या की । कुछ दिनों तक लाहौर में रहकर दिल्ली में भी रहे । परन्तु दिल्ली को अपने विचारों के प्रचार के उपयुक्त न पाकर अजमेर में हिन्दुओं के तीर्थ स्थान पुष्कर चले गए । इस समय अजमेर राजपूत साम्राज्य का शक्तिशाली केन्द्र और हिन्दुओं का तीर्थ स्थान था । शेख-

अब्दुल हक मुहद्दिस देहलवी ने " अखबारुल अख्यार" में अजमेर के धार्मिक महत्व पर प्रकाश डाला है[1]। एक ऐसे महान राजनीतिक एवं धार्मिक केन्द्र में रहने का निश्चय करना न केवल ख्वाजा मुईनउद्दीन चिश्ती साहब के व्यक्तित्व का अनुवाद करता है बल्कि उनके आत्म-निर्भरता को भी प्रकाशित करता है । उन दिनों यहाँ पृथ्वीराज राज्य करता था । ख्वाजा मौईनउद्दीन चिश्ती का भारतीय जनजीवन पर प्रभाव पड़ता रहा कि अजमेर के ब्राह्मण पुरोहितों ने पृथ्वीराज से शिकायत की कि ख्वाजा को निष्कासित कर दिया जाय क्योंकि उनका प्रभाव समाज के निम्नवर्ग के लोगों पर तेजी से बढ़ रहा है । राजा ने पुजारियों के नेता रामदेव को इस कार्य के लिए भेजा । किंवदंती है कि रामदेव स्वयं ख्वाजा के शिष्य हो गए[2]। ख्वाजा साहब का भारतमें प्रवेश करना आध्यात्मिक एवं सामाजी उत्थान का जनजीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा । इस उत्थान को ठीक ढंग से समझने के लिए भारत की समाजी दशा पर एक दृष्टि डालनी आवश्यक है ।

ग्यारहवीं और बारहवीं शताब्दी में भारत की समाजी दशा दयनीय थी । छूत-छात एवं जाति-पाति ने समाज को कमजोर कर दिया था । इसी कारण विदेशियों के समक्ष भारतीयों में एकता का अभाव था हर्षवर्धन की मृत्यु के पश्चात् भारत की राजनैतिक एकता समाप्त हो चुकी थी और देश में छोटी-छोटी राजपूत राज्य स्थापित हो गए थे । ये राजा आपस में ही लड़ते थे और द्वेष की भावना रखते थे । जिससे देश की शक्ति और क्षीण हो रही थी । निर्धन जनता जिन कठिनाईयों का सामना कर रही थी उसका मार्मिक चित्रण प्रसिद्ध इतिहासकार अलबरूनी ने अपनी पुस्तक " किताबउल हिन्द" में खींचा है ---" भारत के जन साधारण का जीवन उनके लिए बोझ था । ईश्वर ने उन्हें मनुष्य बनाया था परन्तु उसके कर्मों ने उन्हें पशुओं की तरह जीवन व्यतीत करने पर मजबूर कर दिया था , जाति प्रथा एवं छूत-छात बहुत है, यही वह सबसे बड़ी रुकावट है जो हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच सम्पर्क स्थापित करने में सबसे बड़ी बाधा है[3]।"

ख्वाजा मौईनउद्दीन चिश्ती ने छूत-छात के इस भयानक वातावरण में इस्लाम का " नजरियए तौहीद" व्यवहारिक रूप से समक्ष रखा और बताया कि यह केवल अनुमान नहीं है, बल्कि जीवन का ऐसा नियम है जिसको ग्रहण करने पश्चात् जाति-पाति का सब भेद व्यर्थ हो जाता है । यह एक महान आध्यात्मिक सूफी समाजसुधार की सूचना थी भारत के निवासियों एवं क्रूटमय प्राणियों के लिए

1- अखबारुल अख्यार --- शेख मुहद्दिस देहलवी पृष्ठ 24 ।
2- पिलग्रिमेज़ ऑफ मिडयल इन्डियन कल्चर पृष्ठ 37 ।
3- किताब-उल-हिन्द ------ अल बेरूनी ।

यह एक प्रकार का मन्त्र था जिसे सुनकर जीवन में उत्साह एवं उमंगें जाग उठती हैं ।

ख्वाजा अजमेरी का जीवन बहुत सरल परन्तु आकर्षक था । भारत के सबसे बड़े समाज के उत्थान का यह नेता एक छोटी सी झोंपड़ी में एक फटी हुई गुदड़ी में लिपटा हुआ बैठा रहता था दीनता को केवल नाम मात्र का करते, परन्तु दृष्टि के प्रभाव की यह दशा थी कि जिस ओर देख लेते उसका जीवन सुधर व बन जाता था । रिसाला" अनवार-ए-दीराने-चिश्त" में लिखा है कि " शेख मुईनउद्दीन ," की दृष्टि जिस नास्तिक पर पड़ जाती वह आस्तिक हो जाता और फिर कभी गुनाह के पास न जाता[3]" ।

पूर्व सदियों में ख्वाजा अजमेरी साहब का बड़ा सम्मान रहा और इसी कारण इन्हें लोग" आफताबे हिन्द"(भारत-भास्कर)कह कर पुकारते रहे हैं । पुष्कर हुसैनी ब्राह्मण नामक एक जाति है जो हिन्दू-मुसलमान धार्मिक मतभेद के खोखलेपन को स्पष्ट और प्रत्यक्ष करती है । मतकना(मतखाना) राजपूत भी इसी प्रकार एक जाति वर्ग है जो पूर्व हिन्दू होते हुए भी मुस्लिम आचार विचारों से प्रभावित हैं अकबर के राज्यकाल में अजमेर का महत्व अधिक बढ़ गया था स्वयं अकबर सम्राट भी इनका बड़ा सम्मान करता था ।

जब अजमेर तुर्कों के राज्य में सम्मिलित हो गया और कुतुबुद्दीन ऐबक ने सैय्यद हुसैन मशहदी को अजमेर का दारोगा (हाकिम) नियुक्त कर दिया वह भी ख्वाजा साहब का आदरपूर्वक सम्मान करता था । सैय्यद हुसैन मशहदी के वंश में ख्वाजा साहब ने अपनी मृत्यु के लगभग सात वर्ष पूर्व विवाह किया और उनके सन्तान भी हुई । ख्वाजा साहब का 97 वर्ष की अवस्था में 16 मार्च 1236 ई0 अजमेर में देहावसान हो गया । ख्वाजा अजमेरी के दो शिष्य विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं ———

1- शेख कुतुबउद्दीन बख्तियार काकी ।

2- शेख हमीद उद्दीन सवाली नागौरी ।

चिश्तियों का दूसरा प्रमुख केन्द्र नागौर के समीप सवाली नामक ग्राम में ख्वाजा मोईनउद्दीन चिश्ती के प्रसिद्ध शिष्य शेख हमीदउद्दीन नागौरी ने स्थापित किया । शेख हमीदउद्दीन नागौरी के पूर्व तुर्कों द्वारा दिल्ली विजय के पूर्व यहाँ पहुँच गए थे । शेख नागौरी साहब का जन्म 1192 ई0 के लगभग हुआ । युवा-अवस्था में ही ख्वाजा अजमेरी साहब की सेवा में पहुँचकर साधना में पर्याप्त उन्नति कर ली । एक दिन ख्वाजा साहब ने प्रसन्न मुद्रा में कहा कि जिसको कुछ माँगना हो माँगे, उसे ईश्वर पूरा करेगा । किसी ने संसार तो किसी ने परलोक माँगा ।

शेख नागौरी ने उत्तर दिया" दास की कोई इच्छा नहीं जो परमेश्वर की इच्छा है, वह मेरी इच्छा है"।

सवाली में एक बीघा भूमि ही आपके कुल सम्पत्ति थी । नागौर के मुकता (हाकिम) ने आपको अधिक भूमि देने का बड़ा प्रयास किया किन्तु आपने स्वीकार न किया । आपने ग्रामीण जीवन का सुखी जीवन में पूर्ण सामन्जस्य कर दिया था । आपके घर में स्थानीय भाषा बोली जाती थी । आप का निधन अक्टूबर 1274 हुआ । सुल्तान मुहम्मद बिन तुगलक (1325-1351 ई0) ने 1331-32 ई0 में ही आपकी कब्र के चारों ओर दीवार बनवादी थी । मकबरे का निर्माण ख्वाजा हुसैन नागौरी ने कराया । आपको कुरआन और हदीस पर विशेष अधिकार था । इमाम - गजाली के प्रसिद्ध ग्रन्थ " कीमियए- सआदत" के अध्यन पर आप विशेष बल देते थे । आप कहा है कि सर्वश्रेष्ठ लोगों का धर्म तवक्कुल (श्रद्धा) है अल्लाह के अतिरिक्त सभी वस्तुओं से, और तवल्ला (प्रेम) है अल्लाह से । शक्ति सम्पन्न होने पर दीनता का भाव प्रकट करने वाला पैगम्बर के समान होता है[1]।

शेख हमीद नागौरी के पुत्र शेख अमीज उद्दीन का निधन उनके पिता के जीवन काल में ही हो गया था । इस स्थिति में शेख अमीजउद्दीन के पुत्र शेख फरीदउद्दीन मसूद अपने दादा के उत्तराधिकारी बने । सुल्तान मुहम्मद बिन-तुगलक शेख हमीदउद्दीन के उत्तराधिकारी के प्रति अत्यधिक श्रद्धा-भाव रखता था । अपने शासन काल के आरम्भ में ही उसने नागौर में दसगाँव शेख अमीजउद्दीन मसूद को किस्सी को प्रदान कर दिये और शीघ्र ही शेख फरीदउद्दीन मसूद को दिल्ली बुलवा लिया । तदोपरान्त अपनी पुत्री बीबी रास्ती का विवाह शेख फरीद के पुत्र शेख फतेहउल्लाह से कर दिया । शेख फतेहउल्लाह अपने दिल्ली के जीवन से संतुष्ट न थे । वे नागौर में स्थित अपने डेह नामक गाँव में छप्पड़ और बोरिस का स्मरण करके फारसी और हिन्दी/काव्य रचनाएँ पढ़ा करते थे । उनकी हिन्दी रचना इस प्रकार है :-

मेरा हियौरा दोवहा(?) जो आने डेह जाऊँ ।
सांगर फूंक करेलीया, सालिक से नेह लगाऊँ।।

मन चाहे मैं सालिक जाऊँ, सांगर फूल करेला खाऊँ[1]।

अन्त में सुल्तान ने अपने जमाता शेख तुलफुल्लाह को डेह जाने की अनुमति प्रदान कर दी । कहा जाता है कि सुल्तान की पुत्री बीबी रास्ती का निधन यहीं डेह में ही हुआ था[2]। शेख फरीदउद्दीन मसूद की परम्परा में मौलाना -

---

1- [illegible]

नियाउद्दीन चश्ती चिश्ती। रूप से प्रसिद्ध है[1]।

दिल्ली में चिश्ती सिलसिले की स्थापना ख्वाजा कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी ने की। उनका जन्म मावनाउन्नहर के उश नामक कस्बे में हुआ था। जब वे बीस वर्ष हुए तो उनकी माता ने उनका विवाह कर दिया। पत्नी की अपनी साधना में बाधक देख सम्भवतः एक सप्ताह के भीतर ही त्याग दिया और शिक्षा ग्रहण करने के उद्देश्य से बगदाद पहुँचे। बगदाद उस समय शेख अब्दुल कादिर जीलानी (मृत्यु 1166 ई0) और शेख शहाबुद्दीन सुहरवर्दी (मृत्यु 1234ई0) के कारण तसव्वुफ का बहुत बड़ा केन्द्र बन गया था। संयोग से ख्वाजा मोईनुद्दीन चिश्ती भी बगदाद पहुँच गये थे। ख्वाजा कुतुबुद्दीन ने ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती से बड़ी दीक्षा प्राप्त की। जब ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती काश्त की ओर प्रस्थान हुए तो ख्वाजा - कुतुबुद्दीन भी उसी दिशा में चल पड़े। सम्भवतः मुल्तान तक उनका और शेख - जालालुद्दीन तबरेजी का साथ रहा।

लगभग 1221 ई0 में चंगेज की सेनाएँ ख्वारज्म के शाही सुल्तान मंगबरनी का पीछा करती हुई सिंध की ओर बढ़ रही थी। इस आक्रमण के कारण मुल्तान के हाकिम कुबाचा को सबसे अधिक चिन्ता थी। उसने ख्वाजा कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी से दुआ करने की याचना की। मंगोल सेना ने तो राजनीतिक परिस्थितियों के कारण ही सिंध नदी पार की किन्तु विश्वास यही किया जाता था कि यह ख्वाजा कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी की दुआओं का फल था। कुबाचा इस घटना से बहुत अधिक प्रभावित हुआ और आप का भक्त हो गया। ख्वाजा साहब दिल्ली चले आए। सुल्तान शमसुद्दीन इल्तुतमिश (1210-1235ई0) ने आप का स्वागत किया। ख्वाजा साहब नगर से कुछ दूर किलोखड़ी में निवास करने लगे। सुल्तान उसके अमीरों, पदाधिकारियों एवं सर्व साधारण की आप से बड़ी श्रद्धा हो ई। सम्भवतः आपने दिल्ली में पुनः विवाह किया किन्तु त्याग और तपस्या पर ही दृढ़ रहे और आर्थिक कठिनाईयों के साथ सरल जीवन व्यतीत करते रहे। एक बार ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती अपने प्रिय शिष्य से भेंट करने दिल्ली पहुँचे। तत्कालीन शैखुल इस्लाम (धर्म संबंधी विभाग के संचालक) शेख नज्मुद्दीन सुग्रा ने जो ख्वाजा साहब के परिचित थे, शिकायत की कि ख्वाजा कुतुबुद्दीन के कारण मेरी ओर कोई ध्यान नहीं देता। ख्वाजा साहब ने नज्मुद्दीन को संतुष्ट करने के लिए ख्वाजा - कुतुबुद्दीन को अजमेर चलने का आदेश दिया। जब दोनों पूर्व रवाना हुए तो सुल्तान शमसुद्दीन से लेकर साधारण नगरवासी तक व्याकुल हो उठे कहते हैं कि

1- तारीखे मशायखे चिश्त ——प्रो0 अलीक अहमद निजामी, अलीगढ़ मु0वि0वि0।

हस्तुतमिश्श को उनके साथ गया और अनुनय विनय करके उन्हें पुनः दिल्ली वापस लाया [1]। ख्वाजा मुईनुद्दीन ने उन लोगों के विलाप को देखकर ख्वाजा कुतुबुद्दीन से लौट जाने और दिल्ली में ही निवास करने का आदेश दिया। जब यह सूचना शम्सुद्दीनको प्राप्त हुई तो वह प्रसन्न होकर ख्वाजा कुतुबुद्दीन की सेवा में उपस्थित होकर उनके साथ नगर में प्रवेश किया उधर ख्वाजा मोईनुद्दीन चिश्ती अजमेर की ओर चले गए। नवम्बर 1235 ई0 में दिल्ली में शेख अली नामक सूफी ने "सेमा" का आयोजन किया था। कव्वाल के निम्नांकित शेर को सुनकर ख्वाजा कुतुबुद्दीन मूर्छित हो गए :-

कुश्तगाने खंजरे तस्लीम रा,
हर ज़मा अज़ ग़ैब जाने दीगरस्त।

अर्थात — तस्लीम (आत्मसमर्पण) के खंजर द्वारा मरे हुए लोगों को प्रत्येक क्षण ग़ैब (अदृश्य लोक) से नए प्राण मिलते रहते हैं।

चार दिन चार रात तक पड़ी रहा। तदुपरान्त प्राण त्याग दिए [2]।

ख्वाजा कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी के क्रान्तिकारी एवं महान शिष्य बाबा फरीदउद्दीन गंजशकर हुए जिन्होंने अजोधन (पंजाब) में अपनी खानकाह बनवाई।

बाबा का शुभ नाम मसऊद, उपाधि फरीदउद्दीन था परन्तु प्रसिद्ध गंजशकर की उपाधि से हुए थे। "सियरूल औलिया" नामक पुस्तक में है कि आप का शुभ नाम मसऊद था परन्तु पंचानवे साल की आयु में कुतुबुलऔलिया शेख फरीद उद्दीन अत्तार ने किसी समारोह में आपको अपना नाम आपको दिया था [3]। "गंजशकर" की उपाधि के विषय में "सियरूलआरफीन" में लिखा है कि बाबा फरीद जब अपने गुरू ख्वाजा कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी से शिक्षा प्राप्त कर रहे थे एक बार बाबा साहब ने निरन्तर सात दिन रोज़ रखे, अफ्तार (रोज़ा-खोलना) के समय अपने हुजरे से गुरू बख्तियार काकी की सेवा में जा रहे थे कड़ी धूप का समय था पाँव में खड़ाऊँ थे जिसके कारण कीचड़ में खड़ाऊँ फिसल गई बाबा साहब गिर पड़े जब बाबा साहब अपने गुरू की महिमा से कीचड़ शक्कर हो गई जब बाबा साहब अपने गुरू की सेवा में उपस्थित हुए उन्होंने यह समाचार सुनकर कहा —" आज मिट्टी तुम्हारे मुँह में शक्कर बन गई, ईश्वर तुम्हारे भविष्य को शक्कर बना देगा। तुम्हारे लिए आवश्यक है कि इस ईश्वरीय देन को कदर जानो

1- तारीख़ एवं टाइम्स ऑफ शेख फरीदुद्दीन गंजशकर — पृष्ठ 20।
2- सियरूल औलिया, पृष्ठ 48, 58, सियरूल आरिफीन पृष्ठ 17, 31, ख़ज़ानतुल अख़्यार पृष्ठ 25, 26।

और अन्य त प्रजा। यों का बाद अपना व्यवहार करो "। इस घटना के पश्चात् आप "बैयाजीद" की उपाधि से प्रसिद्ध हुए । लोक प्रियता के कारण " बाबा फकीर" के नाम से भी जाने जाते हैं ।

जन्म तथा वंशज :- बाबा साहब के पिता जमालउद्दीन सुलेमान सुल्तान शहाबउद्दीन शेरी के समय में ईमानी आक्रमण के कारण काबुल से लाहौर पहुंचे । कुछ दिन लाहौर में रहे, फिर सुल्तान की आज्ञा से मुल्तान आ गए और वहीं उन्होंने मुल्ला नजीब उद्दीन की पुत्री कुरसुम से विवाह किया फिर मुल्तान के निकट कसूर शहर में रहने लगे । यहीं पर सन् ११७५ ई० में बाबा फकीर जन्म लिया । उनकी माता बड़ी धार्मिक प्रकृति की थी । इन की गोद में बैठकर शेख फकीर जी बाबा फकीर के नाम से प्रसिद्ध हैं, आध्यात्मिक जीवन में बहुत उच्च की प्राप्त हुए । उन्हें ईश्वर में लीन हुआ देखकर लोग बड़ी श्रद्धा शीलता (अपने का खाना पुत्र) के नाम से पुकारते थे । बाबा साहब के पूर्वजों की आठवीं पीढ़ी बादशाह फर्रुख शाह काबुल से और नवमीं पीढ़ी में सुल्तान शहाबुद्दीन बिन महमूद और दसवीं पीढ़ी में खलीफा हजरत उमर से जा मिलती है । वंशज परम्परा इस प्रकार से है :-

खलीफा हजरत उमर
सुलेमान बिन नासिर बिन अब्दुल्लाह
महमूद
सुल्तान शहाबुद्दीन बादशाह काबुल
हजरत अबू शहाब
बादशाह अफगानी-उल- कादर
हजरत अब्दुल्लाह
हजरत महमूद
हजरत सुलेमान
हजरत शाहमहमूद
हजरत रमेशान शाह
हजरत महमूद अलमशाह
हजरत नासिरुद्दीन
शेख महमद प्रसिद्ध फर्रुखशाह बादशाह काबुल

१- सुल्तान शहाबुद्दीन की उपाधि, महमूदशाह नाम और उनके पिता का नाम महमूद

शेख शहाबुद्दीन
|
शेख मुहम्मद
|
शेख यूसुफ
|
शेख मुहम्मद अहमद
|
शेख शुएब
|
जमालुद्दीन सुलेमान
|
बाबा फरीद ।

बाबा फरीद ने प्रारम्भिक शिक्षा अपने कस्बे खेतवाल के एक स्कूल में ग्रहण की और बहुत थोड़े समय में अधिकी उन्नति की । इसके पश्चात नगर मुल्तान गए और वहाँ मौलाना सिराजुद्दीन तिमजी की मस्जिद में ठहरकर उनसे फिक्ह की प्रसिद्ध पुस्तक "नफ्ज" पढ़ी । उसी समय में ख्वाजा कुतुबुद्दीन काकी मुल्तान पधारे थे ।[2] एक दिन ख्वाजा कुतुबुद्दीन काकी उस मस्जिद में पधारे जिसमें बाबा फरीद अध्ययन करते थे । ख्वाजा कुतुबुद्दीन काकी की दृष्टि बाबा फरीद पर पड़ी पूछा कि कौन सी पुस्तक पढ़ रहे हो ? बाबा ने उत्तर दिया कि " नाफ्ज "ख्वाजा साहब ने आशीर्वाद के रूप में कहा कि ईश्वर ने 'बड़ा नाफ्ज' तुम्हारे लिए नफ्ज होगी । इस बाणी में क्या जादू था जिससे बाबा फरीद के हृदय पर इस दोहा का इतना प्रभाव पड़ा कि उसी समय ख्वाजा कुतुबुद्दीन काकी को शिष्यता ग्रहण कर ली ।

प्रसिद्ध पुस्तक खैरुल मजालिस में है कि शिष्यता ग्रहण करते समय ख्वाजा कुतुबुद्दीन काकी ने बाबा फरीद की अपनी ओर दृष्टि करके निम्नलिखित रुबाई पढ़ी थी :-

मकबूले तजज़ मकबूले जावेद न शुद,
न जुल्फ़े तु हेच कदह नौमीद न शुद।
तसर्फ़ न कदान कदह बेदस्त दमे,
कीं जरब बतेग़ा ज़हजार कुशदन शुद ।।

मुल्तान से दिल्ली के लिए विदा होते समय ख्वाजा कुतुबुद्दीन काकी के साथ चलने की इच्छा प्रकट की । ख्वाजा काकी ने आदेश दिया कि अभी मुल्तान में रहकर शिक्षा प्राप्त करो इसके पश्चात मेरे पास दिल्ली आओ । बाबा फरीद ने गुरु के आदेशों का पालन किया । ख्वाजा काकी के जाने के पाँच वर्ष तक बाबा साहब मुल्तान में शिक्षा ग्रहण करने में लीन रहे इसके पश्चात् गजनी, बगदाद, सिजस्तान, चर्दीज़ा और कन्दहार में शिक्षा प्राप्त करते रहे । शिक्षा प्राप्ति करने की दशा में भ्रमण करने से निम्नलिखित सूफियों से भेंट हुई :-

---

1- खजीनतुलअस्फिया भाग एक पृष्ठ - 293 ।
2- सियरुल औलिया - पृष्ठ- 91

1- शेख शहाबउद्दीन सुहरवर्दी ।
2- ख्वाजा अबल सजजी ।
3-शेख सैफुद्दीन बाखरजी ।
4- इमाम हदादी। इसके अतिरिक्त सेवि स्थान के सदियों से बैठ को(शेख अब्दुल्लानी कर्मानी) ।

इन देशों का भ्रमण करने के पश्चात् बाबा फ़रीद अपने गुरू ख्वाजा काकी की सेवा में दिल्ली उपस्थित हुए । ख्वाजा काकी ने अपने शिष्य बाबा फ़रीद के लिए अपने निवास स्थान के निकट एक स्थान जहाँ बाबा फ़रीद ईश्वर के ध्यान में लीन हो गए। कुछ वर्ष पश्चात् सौभाग्य उस जब ख्वाजा मोईनउद्दीन चिश्ती अपने प्रिय शिष्य ख्वाजा कुतुबुद्दीन काकी के यहाँ पधारे । ख्वाजा काकी के शिष्य ख्वाजा मोईन-उद्दीन चिश्ती की सेवा में उपस्थित होकर शिक्षा प्राप्त की । अंत में ख्वाजा-मोईनुद्दीन चिश्ती ने अपने प्रिय शिष्य ख्वाजी काकी से कहा कि अब और कोई तुम्हारा शिष्य तो नहीं बचा । ख्वाजा काकी ने कहा कि एक मसऊद नामक शिष्य ईश्वर ध्यान में लीन है । ख्वाजा मोईनउद्दीन चिश्ती ने कहा"चलो मेरे साथ मैं उसको देखूँ । दोनों महान पुरुष फ़रीद के लीन स्थान पर पहुँचे । बाबा साहब अपने गुरुओं का दर्शन करके रोने लगे । उनके अन्दर इतनी शक्ति न थी कि खड़े होकर उन गुरुओं का स्वागत करते । जब ख्वाजा मोईनुद्दीन चिश्ती ने बाबा साहब की यह दयनीय दशा देखी , अपने प्रिय शिष्य ख्वाजा कुतुबुद्दीन काकी से कहा " कुतियार कब तक इस नवयुवक बेचारे को मुजाहिदे(तपस्या) में जलाओगे, इसे आओ हम और तुम जो कुछ इसे देना है दे दें,यह कहकर बाबा साहब का सीधा बाजू ख्वाजा-अजमेरी ने और उल्टा बाजू ख्वाजा काकी ने पकड़ कर उठाया । फिर ख्वाजा अजमेरी ने आकाश की ओर मुँह उठाकर कहा —" हे ईश्वर, फ़रीद को स्वीकार कर और महानतम दर्वेशों के पद पर पहुँचा " ईश्वरी वाणी आई, "हमने फ़रीद को स्वीकार किया।'' फिर ख्वाजा अजमेरी ने विशेष प्रकार का खिलअत दिया और ख्वाजा काकी ने अपनी तस्बीह और खिलाफ़त दिया । इस शुभ अवसर पर निम्नलिखित पुरुष उपस्थित थे :-

1- ख्वाजा हमीदउद्दीन नागौरी ।
2- मौलाना अलाउद्दीन करमानी ।
3- सैय्यद नूरउद्दीन मुबारक गजनवी ।
4- शेख निजामुद्दीन अबुल खैर ।
5- मौलाना शम्सुद्दीन तुर्क ।
6- ख्वाजा महमूद मौनिया दौज और अन्य पुरुष उपस्थित थे ।

एक कवि ने बाबा फ़रीद के सम्बन्ध में निम्न दोहा कहा था :-

बदौलते कुनेन अज़ ख़ैरुद्दीन व निज़ामुद्दीन फ़रीद,
बादशाही याफ़्त अज़ बादशाहाने जहाँ[1]।।

अर्थात दोनों दुनियाँ की दौलत फ़रीद ने अपने गुरुओं से प्राप्त कर ली। दुनियाँ के बादशाहों से उसने बादशाही पाई है।

सियरुल आरिफ़ीन में है कि एकबार ख़्वाजा अजमेरी ने अपने प्रिय शिष्य ख़्वाजा काकी से कहा कि — " बख़्तियार, तुमने एक महान ईश्वर भक्त को पाया है जो सम्पूर्ण विश्व में घर बनाएगा, और वह फ़रीद वह प्रकाश है जो सूफ़ी संतों के आसनों को चमकाएगा[2]।

बाबा फ़रीद प्रसिद्धि को पसन्द नहीं करते थे। एकान्त की अभिरुचि के कारण ही उन्होंने जान बूझ कर राजधानी से दूर अजोधन गए। वे धनवानों को संगति को बड़ी घृणा की दृष्टि से देखते थे। उनके साथ सम्पर्क रखने से बचते थे। उनके एक शिष्य सैय्यद मौला दिल्ली जाने के लिए अजोधन छोड़ना चाहते थे। बाबा फ़रीद ने अनिच्छा से आज्ञा देते हुए इन शब्दों में सम्बोधित किया —"मेरे आदेशों पर ध्यान रखना, बादशाहों और अमीरों को अपना मित्र न बनाना। अपने स्थान पर उनके आगमन को (अपनी आत्मा के लिए) हानिकारक समझना। प्रत्येक उस सूफ़ी दर्वेश का अन्त बुरा होगा जिसने बादशाहों और अमीरों को अपना मित्र बनाया[3]"।

एक बार बाबा फ़रीद ने अपने प्रधान शिष्य शेख़ निज़ामुद्दीन औलिया को संबोधित करते हुए कहा —" इस मार्ग का (सूफ़ी धर्म) प्रमुख लक्ष्य हृदय को एकाग्र करना है जो जीविकोपार्जन के निमित्त साधनों और बादशाहों के संसर्ग से चैन से ही प्राप्त हो सकता है[4]"।

सुल्तान बलबन सूफ़ी और संतों के प्रति बड़ी श्रद्धा एवं आदर सत्कार करता था। वह बाबा फ़रीद के भक्त महान भक्त था, किन्तु बाबा फ़रीद ने कभी कोई लाभ नहीं उठाया। केवल एक बार किसी को ओर से सिफ़ारिशी पत्र लिखा। वह पत्र बड़ी गम्भीर भाषा में लिखा प्रतीत होता है। जिसका अभिप्राय यह है कि मानव को कोई वस्तु प्रदान करने की वास्तविकता शक्ति परमात्मा के पास है। ~~केवल~~ कोई बाबा फ़रीद के पास उपहार स्वरूप एक चाकू लाया। बाबा साहब

1- सियरुल औलिया — पृष्ठ- 7
2- सियरुल आरिफ़ीन —पृष्ठ - 23
3- तारीख़-ए- फ़िरोज़ शाह (बरनी) —पृष्ठ- 185
4- राहत-उल-क़ुलूब — पृष्ठ — 1089 47

ने उसे वापस करते हुए कहा कि मेरे पास चाकू नहीं सुई लाओ । चाकू काटने के काम आता है और सुई सीने के [1]।

कहा जाता है कि बाबा फरीद के मलफूजात (गोष्ठियों के विवरण) संकलित 500 हिकायतें उद्धृत हैं । जियाउल मौलिया के लेखक अमीर खुर्द ने उनमें से बहुत सी हिकायतें अपनी पुस्तक में उद्धृत की हैं । जो बाबा साहब के जीवन के उच्च आदर्शों की द्योतक हैं । कुछ हिकायतें इस प्रकार हैं :—

1- अपने आप से भागना ईश्वर तक पहुँचने के समान समझना चाहिए ।

2- शरीर की आवश्यकताओं की पूर्ति मत करो, जितना दोगे उनकी भूख बढ़ती जायगी ।

3- मूर्ख को जीवित मत समझ ।

4- जो सच झूठ सी हो उसे मत बोलो ।

5- जिसे लोग खरीदने को तैयार न हों, उसे मत बेचो ।

6- सांसारिक सम्पत्ति एवं ऐश्वर्य का लोभ मत कर ।

7- मृत्यु को कहीं न भूल ।

8- प्रत्येक को रोटी मत खा, किन्तु सभी को रोटी दे ।

9- केवल अनुमान के आधार पर कोई बात न कर

10- कष्टों को अपने पापों का परिणाम समझ ।

11- पाप करके अकड़ मत ।

12- अपने अंतरंग को बहिरंग से श्रेष्ठ बना ।

13- अपने श्रृंगार को फैशन मत कर ।

14- उच्च स्थान प्राप्त करने के लिए अपने आप को नीचे मत गिरा ।

15- पुराने बंधों के सम्मान को नष्ट मत होने दे ।

16- आध्यात्मिक उन्नति प्राप्त करने की कोशिश निरन्तर कर ।

17- यथा सम्भव किसी को गाली बकने से रोक ।

18- अपने स्वास्थ्य को ईश्वर की देन समझ ।

19- दूसरों का उपकार करते समय यही समझ कि तू अपना उपकार कर रहा है ।

20- जिस बात को तेरा हृदय बुरा समझे वह मत कर ।

21- उपकार करने का बहाना ढूँढता रह ।

22- शत्रु तुझसे जितना भी संतुष्ट दृष्टिगत हो, उस पर विश्वास मत कर ।

23- शुष्कता के प्रबल होने के समय अपने ऊपर नियंत्रण परमावश्यक है ।

24- अमीरों की संगति में धर्म को मत भूल ।

1- फवाइदुल फुआद —— पृष्ठ 230

25- वैभव एवं प्रतिष्ठा न्याय पर निर्भर है ।

26- जब तुझे धन सम्पत्ति प्राप्त हो, तो दान कर ।

27- धर्म से बढ़कर कोई चीज़ मत समझ ।

28- समय का कोई मूल्य सम्भव नहीं ।

29- अधिकारियों के साथ व्यवहार करते समय ढंग दिखाना आवश्यक समझ ।

30- सदाचारियों के प्रति उदारता प्रकट कर ।

31- शत्रु को पराक्रम द्वारा पराजित । मित्र को नम्रता द्वारा वश में ला ।

32- अपने दोषों की कटु आलोचना कर ।

33- धन उत्तम साधनों से प्राप्त कर ताकि वह तेरे पास रह जाए ।

34- गौरवता प्राप्त करने के लिए दीनता प्रदर्शित करने में संकोच न कर ।

35- शत्रु के कटु वचन पर अपना संतुलन मत त्याग ।

36- शत्रु के सामने ढाल मत पटक ।

37- शत्रु अपमानित नहीं होना चाहता, तो दाव मत फेंक ।

38 -धर्म को ज्ञान द्वारा रक्षा कर ।

39- अपनी इच्छा और बुरी बातों का छिपाए रख ।

40- यदि बड़ा बनना चाहता है- तो दीन दुखियों की सहायता कर ।

41- यदि सुख चैन की इच्छा है तो ईर्ष्या मत कर ।

42- कष्ट को उपहार के रूप में ग्रहण कर ।

43- ऐसा प्रयत्न कर कि तू मौत के बाद भी जीवन (यश) मिल सके ।

बाबा फरीद कहते हैं कि एक बार मैं शेख कुतुबुद्दीन की सेवा में उपस्थित था जब इस विचार से उठा कि हांसी चला जाऊँ आपने रोककर कहा कि मौलाना फरीदुद्दीन है तो मैं जानता हूँ कि तुम चले जाओगे । बाबा फरीद ने कहा जैसी आज्ञा हो । ख्वाजा जी काकी ने कहा अच्छा जाओ वाक्य में बुरी है कि अन्तिम समय में तुमसे भेंट न होगी । आशीर्वाद देने के पश्चात् मुसल्ला और असा (छड़ी) देकर कहा कि मैं (शिर्क, अत्तार, और आरू) काजी हमीदुद्दीन नागौरी को दूँगा, पाँचवे दिन तुम्हें मिल जाएगी उन्हें ले लेना हमारा स्थान तुम्हारा स्थान है । जिस रात कुतुब साहब ने शरीर त्याग दिया उसी रात बाबा फरीद ने उन्हें स्वप्न में देखा कि कुतुब साहब अपने दरबार में बुला रहे हैं । सुबह होते ही दिल्ली की ओर कूच किया, हांसी से दिल्ली पहुँचने में चार दिन लगे । काजी हमीदुद्दीन नागौरी ने उनको चोले दे दी । बाबा फरीद को दिल्ली आए अभी तीन ही दिन हुए थे कि एक मनुष्य सरदंग नाम का हांसी से दिल्ली

आया । दो-तीन बार बाबा साहब की सेवा में उपस्थित होने का प्रयत्न किया किन्तु दरबान (पहरेदार) ने अन्दर आने की अनुमति न दी । एक दिन बाबा साहब घर से बाहर निकले, सरहंगा समय पाकर चरणों पर गिर पड़ा और करुणामय आवाज में कहने लगा, " जब आप दिल्ली में थे सरलतापूर्वक आपका दर्शन कर लिया करते थे । परन्तु अब आपका दर्शन करना कठिन हो गया है । न जाने सरहंगा कि वाणी में क्या जादू था कि बाबा फरीद ने यह अनुभव किया कि दिल्ली में रहकर जनता से सम्बन्ध केवल कम ही जाएगा अपितु राजधानी का कातावरण कार्य में हस्तक्षेप करेगा इसलिए तुरन्त दिल्ली की ओर वापस चले गए । अन्य लोगों ने ध्यान दिलाया कि आपके आध्यात्मिक गुरु ने बड़ी स्थान दिया है । बाबा साहब ने उत्तर दिया —" मेरे गुरु ने जो वस्तु दी वो बड़ी सीमित नहीं है नगर जंगल में भी नहीं है और सुनसान जगह में भी नहीं ।

हम देखते हैं कि बाबा फरीद का दिल्ली न ठहरना चिश्तिया सम्प्रदाय के पक्ष में उतना ही लाभदायक हुआ जितना कुतुब साहब का दिल्ली में रहना । सुल्तान इल्तुतमिश की मृत्यु के पश्चात कुछ समय तक दिल्ली की दशा बिगड़ती रही । ऐसी दशा में बाबा साहब को भी कठिनाईयों का सामना करना पड़ता । उसके विपरीत हांसी और अजोधन में रहकर उनके सम्प्रदाय का कार्य करने में सुन्दर अवसर मिल गया जिसके प्रभाव पंजाब तक ही सीमित न रहे बल्कि उत्तरी भारत के कोने कोने में पहुँचे । दिल्ली में बाबा साहब की प्रसिद्धि की सूचना द्वारा ही देख निजामुद्दीन औलिया बिना देखे उनके प्रेमी हो गए थे । एक बार सुल्तान नासिरुद्दीन कमबूद की फौज अजोधन से प्रस्थान होने लगी उस अवसर पर फौज के जवानों ने बाबा साहब के प्रति जिस प्रेम की भावना प्रकट की उसका देख निजामुद्दीन औलिया द्वारा सुनने योग्य है जिसे इस प्रकार व्यक्त किया है —
" जिस समय सुल्तान नासिरुद्दीन कुतलम की ओर चला । अजोधन पहुँचकर सम्पूर्ण सेना बाबा साहब का दर्शन करने के लिए चल दी, बाबा साहब विशाल सेना देखकर चकित हो गए । बाबा साहब की आस्तीन गली की ओर लटकाई गई । लोग आगर उसे चूमते और ले जाते । यह आस्तीन टुकड़े टुकड़े हो गई । फिर मस्जिद में आकर शिष्यों को आदेश दिया कि मेरे चारों ओर एकत्र हो जाओ जिससे कोई अन्दर न आ सके । दूर से दर्शन करके चले जाएँ । शिष्यों ने आदेश का पालन किया । परन्तु एक बूढ़ा मनुष्य शिष्यों का घेरे से होकर बाबा साहब के पैरों पर गिर पड़ा बाबा साहब को यह बात अच्छी न लगी । उस मनुष्य ने कहा बाबा फरीद, ईश्वर के गुण गाओ, उसके आभारी हो, प्राणियों

से घबराते क्यों हो ? उसकी यह विनय सुनकर बाबा साहब ने उसकी दशा पर दया की और उससे क्षमा माँगी [1]।

बाबा फरीद की इतनी विख्याति प्राप्त हुई थी प्रत्येक समय उन से प्रेम करने वाले परवानों की तरह चारों ओर एकत्र रहते थे । आधी रात तक उनकी धर्मशाला का दरवाजा खुला रहता था । भिन्न भिन्न प्रकार के लोग उनकी गोष्ठी में उपस्थित होते थे । शेख निजामउद्दीन औलिया का कथन है कि —हिन्दू जोगी भी उनकी सेवा में उपस्थित होते थे । बाबा साहब प्रत्येक मनुष्य से उसकी योग्यता के अनुसार बात करते थे । धनवान और निर्धन के बीच किसी प्रकार का भेद भाव नहीं था प्रत्येक नर आने वाले से इस प्रकार मिलते थे कि जैसे कोई से भेंट है । देखो और छुपी में कोई भेद न रखते थे । जो आश्चर्यजनक हो । शेख बदरउद्दीन इसहाक बाबा साहब के साथ हमेशा अन्दर और बाहर रहते थे । कहा करते थे मैं उनका विशेष गुलाम था जो कुछ काम होता वह मुझसे कहते थे । अन्दर और बाहर एक ही बात कहते और करते थे । मुझसे विशेष रूप से अलग ले जाकर कभी ऐसी बात नहीं कही जो सेवकों के समक्ष न कह सकते हों अर्थात सभा और एकान्त में उनका व्यवहार एक था और यह बात बड़ी विचित्र है[2]। अमीर खुसरो ने एक स्थान पर बाबा साहब के विषय में कितनी अच्छी बात कही है । —"मनुष्य की अच्छाई और बुराई छिप नहीं सकती, जिस प्रकार राजा की जेब में कस्तूरी पड़ी हो अवश्य सुगन्ध देगी और डोली के अन्दर में होगी तो उसका रंग अवश्यक दिखाई देगा"

भारतवर्ष में सूफियों का योगियों से सम्पर्क 13वीं सदी के प्रारम्भ से ही आरम्भ हो गया था । ये योगी कौन थे? इसका निश्चित ज्ञान हमें साहित्य में नहीं मिलता । किन्तु इनके विवरणों से पता चलता है कि ये नाथ पंथी थे । जिन्हें हठयोग पर पूर्ण अधिकार प्राप्त था । इनमें अजवानी, बौद्ध, तांत्रिक और सहजयानी थे । हम निश्चित रूप से इसका निराकरण नहीं कर सकते । सातवीं सदी ई० के सहजयानी सरहपाद ने अपने समयके धार्मिक वातावरण का उल्लेख इस प्रकार किया है :-

ब्राह्मणों का रहस्य का ज्ञान नहीं । वे व्यर्थ ही पाठ किया करते हैं, मिट्टी जल व कुश लेकर मंत्र पढ़ा करते हैं और घर के भीतर बैठकर होम के धुएं से अपनी आँखों को फूट दिया करते हैं । वे परमहंस बनकर जगवासियों में उपदेश देते फिरते हैं । उचित अनुचित का भेद न समझते हुए भी ज्ञानी होने का ढोंग रचा करते हैं । शैव लोग आँखों के रूप में शरीर पर भस्म लपेटते हैं, सिर पर जटा बाँधते हैं और दीपक जलाकर घंटा बजाया करते हैं । बहुत से जैन लोग

बड़े बड़े नख रखकर मलीन वेश में नंगे रहा करते हैं और शरीर के बाल उखाड़ा करते हैं । अपक लोग इसी प्रकार "पुच्छ" के बाल ग्रहण किये फिरते हैं और अपनी वृत्ति से रहकर जीवन व्यतीत करते हैं । श्रमणेर व भिक्षु लोग प्रव्रजित की वंदना करते हैं, " सुश्रोत " की व्याख्या किया करते हैं और केवल चित्त द्वारा चित्त शोधन का प्रयास करते हैं । किन्तु लोग महायानी बनकर तर्क-वितर्क में प्रवृत्त होते हैं, मण्डल-चक्र की भावना करते हैं और चतुर्थ तत्व के उपदेश देते हैं तथा अन्यलोग अपने को शून्य में मिला देने की आशा में अभिधर्म वाणी के पीछे पड़े रहते हैं[1]।

नाथयोगी सम्प्रदाय के मूल प्रवर्तक गुरु गोरखनाथ ने प्राचीन योग परम्पराओं, व्रजयानी और सहजयानी पद्धतियों एवं शैव सम्प्रदाय के सिद्धान्तों के आधार पर नाथ पंथी परम्परा चलाई । उनके जन्म स्थान एवं जीवन काल के विषय में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता । दसवीं सदी ई० के अन्त अथवा ग्यारह सदी के प्रारम्भ में ही इनका जीवन काल निश्चित करना होगा । इनके अद्भुत संगठन शक्ति एवं इन के चेलों के उत्साह पूर्वक किए गए सतत परिश्रम ने शीघ्र ही आसाम और बंगाल से लेकर पेशावर और उसके आगे कुरासान व तुरान तक इनके मत को प्रसिद्ध कर दिया । ये प्राणायाम को अधिक महत्व देते हैं । इनका हठयोग यद्यपि प्राचीन परम्परा से अधिक भिन्न नहीं है किन्तु ग्यारह वीं सदी ई० से इसका विविध प्रकार नाथ सिद्धों के आन्दोलन के कारण प्रारम्भ हुआ । हठयोग प्राणवायु का निरोध करके कुण्डलिनी को उद्बुद्ध करता है । उद्बुद्ध कुण्डली क्रमशः षट्चक्रों का भेद करती हुई सातवें अन्तिम चक्र सहस्रार में शिव में मिलती है[2] ।

अजोधन (पाक पट्टन) में बाबा फरीद की खानकाह (मठ) में योगी भी पहुँचा करते थे । और वाद-विवाद हुआ करता था । बाबा फरीद के प्रिय शिष्य निजामउद्दीन औलिया ने बाबा साहब की तीन गोष्ठियों में योगियों की भेंट का उल्लेख किया है । यह भेंट बाबा फरीद की खानकाह में विभिन्न अवसरों पर हुई थी ।

तदुपरान्त कहा कि मैं एक बार अजोधन में शेख (बाबा फरीद) की सेवा में था कि एक योगी आया । मैंने इससे पूछा कि तुम किस मार्ग पर अग्रसर हो और तुम्हारी साधना का मूल भेद क्या है? उसने उत्तर दिया कि हमारे ज्ञान के अनुसार पिंड में जो जगत हैं -एक उल्वी (सर्वोच्च अथवा तुर्य जगत), दूसरा सुफ्ली (भौतिक अथवा जाग्रत जगत) ।

सिर की चोटियों से नाभि तक उतरो और नाभि से चरणों तक सुफ्लो । साधना का भेद यह है कि सच्चाई, सफाई, निष्ठा एवं सद्व्यवहार का सम्बन्ध उतरो से और नियंत्रण, सादगी एवं पवित्रता का सम्बन्ध सुफ्लो से है[1] ।

शेख निजामुद्दीन औलिया को इस विवरण से बहुत सन्तोष प्राप्त हुआ । दूसरी गोष्ठी का विवरण इस प्रकार है —एक बार शेख (बाबा फरीद) की गोष्ठी में इस विषय पर वाद विवाद हो रहा था कि आजकल जो सन्तान उत्पन्न होती है उसमें आध्यात्मिक रुचि का अभाव है इसका कारण यह है कि लोग स्त्री-भोग-का उचित समय नहीं जानते । योगी ने जो उपस्थित था कहना प्रारम्भ किया कि प्रत्येक मास में या तो 30 दिन होते हैं या 29, प्रत्येक दिन की विशेषताएँ भिन्न हैं, उदाहरणार्थ —पहले दिन स्त्री-भोग से इस प्रकार का पुत्र उत्पन्न होगा, और दूसरे दिन के मैथुन से इस प्रकार का । योगी प्रत्येक दिन की विशेषता बताता जाता था और मैं (शेख निजामउद्दीन औलिया) याद करता जाता था । जब योगी बता चुका और मैंने कंठस्थ कर लिया तो मैंने योगी से कहा, " सुन तो योगी बता चुका और मैंने कंठस्थ कर लिया या नहीं" जब मैंने यह बात कही तो शेख फरीदउद्दीन (अल्लाह उनके रहस्यों को पूज्य बनाए) ने मेरी ओर मुड़कर के कहा कि तू इन बातों को जो पूछ रहा है, उससे तुझे कोई लाभ न होगा[2]। तीसरे विवरण का सम्बन्ध बाबा फरीद के एक नए चेले और योगी से है । बाबा फरीद की सेवा में एक विद्यार्थी ने, जो व्यापार करना चाहता है दीक्षा प्राप्त कर सिर के बाल मुड़वाए । एक दिन एक योगी खानकाह (मठ) में आ गया विद्यार्थी उससे सिर के बाल बढ़ाने की औषधि पूछने लगा । शेख निजामउद्दीन औलिया ने बताया कि मेरे हृदय में उस विद्यार्थी की ओर से घृणा हो गई सिर के बाल मुँडवाने का उद्देश्य यह है कि अभिमान को त्याग दिया जाए । दीक्षा प्राप्त कर लेने के पश्चात बाल बढ़ाने की औषधि पूछने की कोई आवश्यकता न थी[3]।

शेख जमालउद्दीन हाँसवी बाबा साहब के बड़े प्रिय शिष्य थे । बाबा साहब के शिष्य होने के पूर्व सरकारी अधिकारी थे और खतौली के पद पर आरूढ़ थे । उनके पास धन-सम्पत्ति और गाँव थे । किन्तु जब बाबा साहब के शिष्य बने, धन सम्पत्ति गाँव इत्यादि त्याग कर फकीरों के समान जीवन व्यतीत करने लगे । बाबा साहब को उन पर बड़ा गर्व था और वे कहा करते थे कि (शेख) जमाल मेरा जमाल (सौन्दर्य) है । शेख जमाल की मृत्यु बाबा साहब के

1- फवाइद उल फुआद — पृष्ठ 97
2- फवाइद उल फुआद — पृष्ठ 257-58
3- फवाइद उल फुआद — पृष्ठ 250

जीवन काल में हो गई । शेख जमाल की दासी जो मादरे मोमिन (धर्म-निष्ठ मुसलमानों की माता) कहलाती थी, उनकी नमाज पढ़ने की चटाई और डंडा जो शेख जमालउद्दीन को बाबा साहब से मिला था, लेकर हांसी से बाबा साहब की सेवा में अजोधन पहुँची । अपने साथ शेख जमालुद्दीन के पुत्र मौलाना बुरहानुद्दीन को भी जिनकी अवस्था अधिक न थी साथ लेती गई । बाबा साहब ने बुरहानुद्दीन का बड़ा आदर किया और उन्हें दोला प्रदान की और कुछ दिन तक अपने पास रखा । जब बुरहानुद्दीन विदा होने लगे तो बाबा साहब ने खिलाफत नामा (वह अधिकार पत्र जिसके द्वारा सूफी खलीफा उत्तराधिकारी नियुक्त करते थे) नमाज पढ़ने की चटाई और डंडा जो शेख जमालउद्दीन को दिया था बुरहानउद्दीन को प्रदान किया और कुछ समय तक शेख निजामउद्दीन औलिया के साथ रहने का आदेश दिया । मादरे-मोमिन ने बाबा साहब से हिन्दी भाषा में किया — "खोजा बुरहानुद्दीन बाला है" अर्थात सब भारी बोझ को न उठा सकेगा । बाबा साहब ने हिन्दीयें ही उत्तर दिया —" मादरे -मोमिना, पूनों का चाँद भी तो बाला होता है" अर्थात चौदहवीं का चाँद प्रथम रात्रि में छोटा होता है , धीरे धीरे पूर्ण होता है[1]"।

कुछ दिन पश्चात इनकी परम्परा निजामउद्दीन औलिया में सम्मिलित हो गई ।

सूफी और नाथपंथी सिद्ध दोनों ही स्थानीय भाषा का जिन्हें तत्कालीन फारसी भाषा-भाषी "हिन्दवी" कहते थे, प्रयोग करते थे । गुरु गोरखनाथ एवं उनके चेलों की हिन्दी वानियों ने सूफी विचार धारा को जिस प्रकार प्रभावित किया उस वातावरण के समझने के लिए शीघ्र में हिन्दवी के रूप को समझ लेना आवश्यक है ।

हिन्दवी शब्द का प्रयोग हिन्द अथवा भारत में बोली जाने वाली आर्य, द्रविड़ तथा कुल की सभी भाषाओं के लिए होता था । फारसी बोलने वालों को जनता से सम्पर्क स्थापित करने के लिए हिन्दवी का प्रयोग करना पड़ता था । सूफियों की खानकाहों (मठों) में विशेष रूप से बाबा फरीद की खानकाह में हिन्दवी का अधिक प्रयोग था । सियरुल औलिया में ही बाबा फरीद का एक "दोहरा" भी संकलित है । यद्यपि उसका पाठ कुछ इस प्रकार किया जा सकता है ——

कस न होहिं तन काहू रे, नागी रहत मनाई,
बिस कुंडली भवन गिरि, होरे तुहद कहाई ॥[2]

1- सियरुल औलिया पृष्ठ 180-183

इसके अतिरिक्त " हमुये हिन्दी" के प्रसिद्ध लेखक शेख अब्दुल वाहिद बिलग्रामी ने अपने महत्वपूर्ण ग्रन्थ " सबा सनाबिल" में बाबा साहब के दो अन्य "दोहरे" उद्धृत किये हैं और उनका फारसी पद्यानुवाद स्वयं किया है । दोहों का पाठ इस प्रकार किया जा सकता है ——

टोपी टेढ़ी चादरे, टेढ़ी धरी निलज्ज,
बुरा गहूडन न मानवे, पिछे बंधते छज्ज ।
मुंडा मुंडड मुडाइयाँ, सिर मूंडे किया होय,
कितने की भेड़ा मुंडया, सुरग न लहुये कोय[1]।।

इस बात तक के सूफियों में काव्य को कंठस्थ कर लेने की ही प्रथा थी उन्होंने अपनी वाणियों को स्वयं लिपिबद्ध नहीं किया बाबा फरीद के श्लोक पंजाबी भाषा में है, सिखों का कथन है कि बाबा फरीद ने पंजाबी भाषा में जो श्लोक कहे थे विभिन्न शिष्यों ने उनके वचनों को कंठस्थ कर मौखिक परम्परा से गुरू नानक तक पहुँचाये । गुरूनानक के द्वारा गुरू अर्जुन तक पहुँचे । जिन्होंने उन्हें अपनी धार्मिक ग्रन्थ " गुरू ग्रन्थ" में सम्मिलित कर लिया । इन श्लोकों पर दृष्टि डालने से यह वास्तविकता भी सामने आती है कि ये श्लोक आध्यात्मिक एवं धार्मिक दोनों दृष्टियों से उच्च कोटि के हैं । गुरू ग्रन्थ साहब में बाबा फरीद के श्लोकों को महान आदर देना इस बात का उदाहरण है कि गुरू नानक महान विचारक थे । वे सच्चाई की खोज में थे इसलिए सच्चाई का प्रकाश जहाँ कहीं भी दिखा उन्होंने उसका स्वागत कर अपने हृदय को प्रकाशित किया ।

आदि ग्रन्थ गुरू ग्रन्थ साहब में बाबा शेख फरीद के नाम से चार पद (राग, आसा, राग सूही में) और एक सौ तीस श्लोक दिये गए हैं[2] । गुरू ग्रन्थ साहब में जिन भक्तजनों की रचनाएं संग्रहीत हैं उनका समय ईसा की बारहवीं शताब्दी के मध्य से लेकर 19 वीं शताब्दी के मध्य तक का है । ऐसी स्थिति में बाबा साहब जो अपने समय से प्रतिष्ठित एवं लोक प्रिय सूफी सन्त थे, कि रचनाओं का इस श्रेष्ठ उपास्य ग्रन्थ में संगृहित किया जाना कुछ असंगत नहीं प्रतीत होता । इस प्रसंग में डा० अब्दुल हक ने भी अपनी पुस्तक में बाबा फरीद की रचनाओं के सम्बन्ध में संक्षिप्त में लिखा है ——" जमजाते शाही में जो हजरत शाह आलम के मलफूजात का मजमूआ है हजरत शेखफरीद (बाबा फरीद) का मंजूम दोहा नकल किया गया है :-

आसा केरी बाड़ी सुरीत, जाऊँ नाथ की जाऊँ मसीत[3]।

1- सबा सनाबिल - पृष्ठ 58
2- गुरू ग्रन्थ साहब, द्वितीय हिन्दी संस्करण 1951 ई०, पृष्ठ 714, 1377-1384 ।
3- उर्दू की इब्तदाई नस्वानुमा में सूफियाए-कराम का काम - पृष्ठ 11

इससे स्पष्ट हो जाता है कि बाबा साहब समय समय पर आवश्यकतानुसार दौरा किया करते थे । बाबा फरीद के पूजा पाठ में जो प्रयत्न किया था वह अन्य सूफी कवि नहीं कर सकता । चिल्ला मजूब (चालीस रात कुएँ में सर नीचे पाँव ऊपर करके ईश्वर की तपस्या करना) लगातार रोजे (व्रत) रखना और कोने, शीतु के सेवन ने उनके शरीर को लाग़र और कमजोर बना दिया । पुस्तकों में एक बार कहने लगे —" चालीस वर्ष तक जो कुछ ईश्वर ने कहा मसअ ने वही किया, अब कुछ कहीं से जो कुछ मसअ के हृदय में होता है, वाह है " ।

वास्तविकता यह है कि बाबा फरीद ने अपने प्रयत्न एवं आचरण से जनता के हृदय में घर कर लिया था जिससे सूफी सन्तों का उनके निकट घेरा बढ़ता गया । उनके सुधार सम्बन्धी नियम एवं शिक्षा ने एक ऐसा स्थाई रूप धारण कर लिया है जिसके कारण उनके शिष्यों एवं श्रोताओं का एक ऐसा समूह तैयार हो गया जिसने ऐसे के सैकड़ों में चिश्ती सम्प्रदाय को खानकाहें (मठ) स्थापित कर हमेशा के लिए अमर बना दिया ।

बाबा फरीद के प्रमुख उत्तराधिकारी :-

1- शेख जमालुद्दीन हाँसवी ।
2- शेख बदरुद्दीन इसहाक ।
3- शेख निजामुद्दीन औलिया ।
4- शेख अली अहमद साबिर ।
5- शेख शरीफ ।

<u>शेख जमालुद्दीन हाँसवी :-</u> यह बाबा फरीद के प्रिय शिष्य थे । उनके प्रेम में साठ बारह वर्ष तक हाँसी में रहे । अधिकतर कहा करते थे कि जमाल वास्तव में हमारा जमाल(सौन्दर्य) है । शेख बदरुद्दीन अकीदा कुतानी ने एक बार बाबा साहब को लिखा कि मेरे सम्पूर्ण शिष्यों को लेकर जमालुद्दीन ले गुजरे हैं । बाबा साहब ने उत्तर में लिखा कि जमाल मेरा जमाल है शून्य मात्र में हो सकता है न कि जमाल में । बाबा साहब का यह नियम था कि जिसे उत्तराधिकारी नियुक्त करते उससे कहते कि जमालुद्दीन से इस पर हस्ताक्षर करा लेना । शेख जमालुद्दीन की मृत्यु बाबा साहब के सामने ही हो गयी थी उनके दो पुत्र थे । बड़े पुत्र मजबूब (जिसे संसार/व्यापार न हो) थे । दूसरे पुत्र की आयु कम थी जिनका नाम मौलाना बुरहानुद्दीन सुल्तान था ।

7- बीबी शरीफ़ ।

8- बीबी फ़ातमा ।

शेख नसरुद्दीन मसरुल्लाह :- यह बाबा फ़रीद के सबसे बड़े पुत्र थे खेती करते थे । इनके एक पुत्र शेख बाजीद थे यह भी दरवेश (सन्यासी) थे । मालवा के प्रसिद्ध सूफ़ी और शेख निजामुद्दीन औलिया केंद्रिय उत्तराधिकारी शेख कमालुद्दीन शेख बाजीद के ही पुत्र थे । मालवा में चिश्तिया सम्प्रदाय की उन्नति इन्हीं के द्वारा हुई है ।

शेख शहाबुद्दीन :- आपसे शेख निजामुद्दीन औलिया को बड़ा प्रेम था । इनके छः पुत्र थे । शेख हेसामुद्दीन औलिया, शेख अब्दुल मजीद, शेख मसऊद, शेख अली शेर, शेख मुहम्मद, और शेख अमीद । विस्तारपूर्वक जानकारी के लिए अवाइरे फ़रीद नामक पुस्तक देखिए ।

शेख बदरुद्दीन सुलेमान :- यह बाबा फ़रीद के तीसरे पुत्र थे जो बाबा साहब के गद्दी पर बैठे थे । सुल्तान मुहम्मद तुगलक आपका वक्त हो गया था । शेख बदरुद्दीन के पुत्र शेख अलाउद्दीन थे इनके दो पुत्र थे शेख मजाजुद्दीन और इल्मुद्दीन । शेख मजाजुद्दीन को मुहम्मद तुगलक ने गुजरात भेज दिया था वहीं उनकी मृत्यु भी हुई । शेख इल्मुद्दीन को मुहम्मद तुगलक ने शेख-उल-इस्लाम बना दिया था । इनके पुत्र का नाम मजहरुद्दीन था ।

शेख निजामुद्दीन :- बाबा फ़रीद सब पुत्रों में सबसे अधिक प्रेम करते थे । सुल्तान बलबन की सेवा में कर्मचारी थे । उनके एक पुत्र ख्वाजा इब्राहीम थे, उनके पुत्र ख्वाजा अजीजुद्दीन थे जो निजामुद्दीन औलिया के शिष्य एवं उत्तराधिकारी थे ।

शेख याकूब :- यह बाबा साहब के सबसे छोटे पुत्र थे । अमरोहे में रहते थे । उनके दो पुत्र थे । उनके दो पुत्र थे ख्वाजा मजाजुद्दीन एवं ख्वाजा काजी । प्रथम भाई ने देवगीर को अपना निवास स्थान बनाया और दूसरे पुत्र की मृत्यु दिल्ली में हुई ।

बीबी मतुरह :- इनके पुत्र ख्वाजा अजीज सूफ़ी निजामुद्दीन औलिया के शिष्य थे । इन्होंने अपने गुरु के सम्बन्ध में एक पुस्तक 'लैहफ़ुल अबरार' लिखी थी । इनके पुत्र ख्वाजा कुतुबुद्दीन हसन थे जो शेख नसीरुद्दीन चिराग देहलवी के शिष्य थे ।

बीबी शरीफ़ :- आप बाबा फ़रीद की दूसरी सुपुत्री थी जो ईश्वर भक्ति में लगी रहती थी । बीबी शरीफ़ युवावस्था में ही विधवा हो गई

बाबा फरीद ने उन्हें निजामउद्दीन औलिया के संरक्षण में कर दिया था । इस प्रकार उनकी परम्परा निजामउद्दीन औलिया में सम्मिलित हो गई ।

शेख बदरउद्दीन इसहाक :- बाबा साहब के दामाद और उत्तराधिकारी थे वे महान शिक्षा प्रेमी थे । ईश्वर से इतना अधिक लय लगाये थे कि कभी आपकी आँखें आँसू से खाली न रहती थीं । शेख साहब ने चिश्ती परम्परा के फैलाने में अधिक कार्य नहीं किया परन्तु वह चिश्तिया सम्प्रदाय के एक महान दूत थे । शेख साहब के दो पुत्र थे । ख्वाजा मुहम्मद इमान और ख्वाजा मुहम्मद मूसा । शेख साहब की मृत्यु के पश्चात् निजामुद्दीन औलिया ने उनके पुत्रों एवं स्त्री को दिल्ली बुला लिया था और पुत्रों की देख रेख स्वयं विशेष रूप से करते थे ।

शेख शरीफ :- बाबा फरीद ने इन्हें उत्तराधिकारी बनाने के पश्चात 'सेविस्तान' भेज दिया था । विस्तारपूर्वक आप के विषय कहीं नहीं मिलता सियरूल औलिया में बहुत संक्षिप्त में लिखा है ।

वास्तव में बाबा फरीद के दो शिष्यों ने चिश्ती सम्प्रदाय को चलाया । 1- निजामुद्दीन औलिया, 2- शेख अली अहमद साबिर । परन्तु उनमें भी शेख निजामुद्दीन औलिया अधिक प्रसिद्ध हैं । शेख निजामुद्दीन औलिया के समय को हम चिश्तिया सम्प्रदाय का स्वर्ण काल कह सकते हैं । उन्होंने भारत के दूर दूर भागों में सम्प्रदाय की खानकाहें (मठ) स्थापित कराई । सुधार एवं शिक्षा के कार्य को महान रूप प्रदान किया ।

शेख अली अहमद साबिर :- स्वयं शेख अली अहमद साबिर चिश्ती सम्प्रदाय की उन्नति के लिए कुछ न कर सके । परन्तु उनके पश्चात् के लोगों ने उस को उन्नति प्रदान करने में बड़ी कठनाईयाँ की । इस सम्प्रदाय के सम्बन्ध में साबिरी सम्प्रदाय के इतिहास के सम्बन्ध अध्ययन से विस्तार - पूर्वक अनुमान लगाया जा सकता है ।

बाबा फरीद की सन्तान :- बाबा साहब के पाँच पुत्र थे एवं तीन पुत्रियाँ थी :-

1- शेख नसीरुद्दीन नसरुल्लाह ।

2- शेख शहाबउद्दीन ।

3- शेख बदरउद्दीन सुलैमान ।

4- शेख इब्राहिम उद्दीन ।

5- शेख याकूब ।

6- [illegible] ।

थी फिर अन्तिम समय तक दूसरा विवाह नहीं किया उसके पश्चात् ईश्वर भक्ति में इतना लीन हो गई कि बाबा फरीद ने कहा कि अगर उत्तराधिकारी को कुछ अनुमति स्त्रियों को होती तो मैं बीबी शरीफा को नियुक्त करता ।

बीबी फातमा :- यह तीसरी सुपुत्री मौलाना बदरुद्दीन से विवाहित थी । उनके दो पुत्र ख्वाजा अहमद और ख्वाजा मूसा था । दोनों पुत्र जिनकी देख रेख निजामुद्दीन औलिया ने अपने सम्भल रखकर बाबा फरीद के शिष्य ख्वाजा अहमद पेशावरी को उनका अतालीक (संरक्षक) नियुक्त किया । बड़े होकर दोनों बालक निजामुद्दीन औलिया के शिष्यों में सम्मिलित होगए ।

इस प्रकार निजामुद्दीन औलिया ने मौलाना बदरुद्दीन के प्रेम का कर्तव्य पूरा कर दिया था ।

शेख निजामुद्दीन औलिया और चिश्ती समय का स्वर्ण युग :- भारत में चिश्तिया सम्प्रदाय का पौधा शेख मोईनुद्दीन ने चिश्ती के हाथों लगा । बाबा फरीद ने उसे बल दिया । निजामुद्दीन औलिया ने उसे सींच कर विशाल बना दिया था । स्वयं बाबा फरीद ने निजामुद्दीन औलिया के लिए ईश्वर से प्रार्थना की थी कि तू एक ऐसा वृक्ष हो जिसके साए (नीचे) में बड़ी संख्या में जनता प्रसन्नतापूर्वक जीवन व्यतीत करे ।

लगभग पचास वर्ष तक मनुष्य के हृदय में इस प्रकार से उनके खानकाह (मठ) में रहकर सुकून प्राप्त किया जैसे कोई पथिक परिश्रम करके कड़ी धूप चलकर वृक्ष के नीचे अपनी थकान दूर करके ठंडी चैन की सांस ले रहा है । निजामुद्दीन औलिया की खानकाह (मठ) का दरवाजा चौबीस घंटे खुला रहता था । निर्धन, धनवान, नगर, देहात, बूढ़े और बच्चे सब ही प्रकार के लोग उनकी सेवा में उपस्थित रहते थे । प्रसिद्ध इतिहासकार जियाउद्दीन बर्नी (तारीख-ए-फिरोजशाही) निजामुद्दीन औलिया के शिष्यों में सम्मिलित थे । शेख निजामुद्दीन औलिया के स्वभाव के सम्बन्ध में लिखते हैं :-

जिस समय शेख निजामुद्दीन औलिया ने चैशत (दीक्षा) का दरवाजा खोल रखा था । गुनहगारों को खिर्का(चोबर) पहनाते थे । और उनसे तौबा (क्षमा) कराते थे । अपनी इच्छा से स्वीकार करते थे । प्रत्येक मनुष्य को चाहे वह अपना हो या आम, धनवान हो या निर्धन राजा हो या भिखारी, शिक्षित हो या अशिक्षित, सज्जन हो या दुष्ट, नगर का हो या गांव का, प्रत्येक को खिर्का (चोबर) भेंट करते थे । मिस्वाक (दतुवन) देते और तौबा(क्षमा)

कराते थे और अनेक कुकार्य से बचने का प्रयत्न करते थे । अगर निजामऊद्दीन औलिया के आने वालों में किसी से गलती हो जाती तो क्षमा माँगकर फिर से दिर्क (चोवर) ले लेता था जिसका परिणाम यह हुआ कि जो लोग दुराचार्य करते थे वह अब धीरे धीरे शुद्ध कार्य करने का प्रयत्न करने लगे थे अब वह अधिकतर ईश्वर भक्ति की ओर उन्मुख होने लगे । अपने और पराए के हृदय में सुकार्य ने स्थान ग्रहण कर लिया । स्त्री, पुरुष, युवक, बच्चे, वृद्ध नगर, गाँव, गुलाम और नौकर सब नमाज पढ़ते थे । क - - - - - - - - - - नगर से ग्यासपुर तक अनेक स्थानों पर चबूतरे बनाए गए थे, छप्पर डाल दिए गए थे । कुएँ खुदवाए गए थे । पानी से भरे हुए छिल्ले, मिट्टी, के लोटे रखे रहते थे । चटाइयाँ भी बिछी रहती थी । प्रत्येक चबूतरे एवं छप्पर में एक हाफिज और एक कर्मचारी नियुक्त कर दिया गया था । जिससे शिष्यों एवं क्षमा करने वालों और सज्जनों को शेख(गुरु) के पास आने जाने में नमाज (पूजा) के समय वजू करने में किसी प्रकार की कठिनाई न हो । बर्नी ने कई पेज में विस्तार पूर्वक लिखा है । और फिर लिखा है कि ईश्वर ने शेख निजामऊद्दीन औलिया को पिछली शताब्दियों में शेख जुनैद और शेख बायजीद के उदाहरणार्थ उत्पन्न किया था ।

प्रोफेसर मुहम्मद हबीब साहब ने शेख निजामऊद्दीन औलिया को उनके स्वर्ण कार्य और प्रभाव के आधार पर भारत का सब से महान मुसलमान सूफी कहा है डाक्टर इकबाल ने भी उनको अत्यधिक उच्च कोटि का स्थान दिया है :-

तेरी लहद की जियारत है जिन्दगी दिल की,
मसीह व खिज्र से ऊँचा मुकाम है तेरा ।।

शेख निजामऊद्दीन औलिया के उत्तराधिकारी:- शेख के प्रयत्नों से चिश्ती सम्प्रदाय का भारत प्रभाव के प्रत्येक भाग में पहुँच गया था ।

लेखक साहब गुलजार ने लिखा है — इस समय भारत भूमि की दशा विचित्र थी क्योंकि शेख साहब की गोष्ठी से नए नए उत्तराधिकारी बनाकर भेजे जाते थे । उनके प्रभाव से भारत का लगभग प्रत्येक घर और कुमार्ग मार्गदर्शक हो गया था । एक कथन है कि शेख निजामऊद्दीन औलिया ने बड़े बड़े नगरों में उच्च कोटि एवं प्रभावशाली सात सौ उत्तराधिकारी ऐसे भेजे थे कि प्रत्येक मनुष्य के हृदय में प्रेम सुरज फूट रहा हो ।

जियाउद्दीन बर्नी और अमीर खुर्द (लेखक सियरुल औलिया) ने शेख के प्रभाव का जो चित्र पेश किया है उसको दृष्टि में रखकर सात सौ की संख्या असम्भव नहीं मालूम होती है । लेकिन दुख है कि शेख के बहुत कम उत्तराधिकारियों के [illegible]

और इकमुलमजालिस और इकमुलकमाल के आधार पर शेख के निम्न लिखित उत्तराधिकारी के नाम आते हैं :-

1- मौलाना अमजुद्दीन पटना ।

2- शेख नसीरुद्दीन चिराग देहलवी ।

3- शेख कुतुबुद्दीन मुनव्वर ।

4- मौलाना शेखामउद्दीन मुल्तानी ।

5- मौलाना नज्मुद्दीन सर्राजी ।

6- मौलाना अलाउद्दीन नीली ।

7- मौलाना बदीउद्दीन गुजुक ।

8- मौलाना सिराजउद्दीन उस्मानी ।

9- मौलाना शहाबुद्दीन दौलताबाद ।

10-शेख फरीदुद्दीन ।

11- काजी मौहीउद्दीन काशानी ।

12- आगा मुहम्मद इमाम ।

<u>शेख नसीरुद्दीन चिराग देहलवी</u> :- इन्होंने सूफियों के विभिन्न सूफी में रह कर अध्ययन का कार्य किया और बड़ी खिलाफ सब्र सय को आलमकोट(मठ) स्थापित किया और सम्प्रदाय को सेवा की । परन्तु दिल्ली में शेख नसीरुद्दीन चिराग देहलवी ने केन्द्र में रह कर अपने गुरु(शेख) को मर्यादा को सेवाया । उनके अन्दर शेख अपने गुरु के श्रेष्ठ गुण थे । शिवाज़ अलिया के लेखक का कथन है — जो सुकून शेख निजामउद्दीन औलिया की गोष्ठियों में आती थी वैसी ही सुकून शेख नसीरुद्दीन चिराग देहलवी की गोष्ठियों में आती है ।

शेख नसीरुद्दीन ने प्रारम्भिक समय में अमीर खुसरो द्वारा शेख (गुरु) से प्रार्थना की थी कि उनको रूहानी ज्ञान पर रहकर सन्तुष्ट करने का आज्ञा दे दी जाए । शेख ने उत्तर दिया ,,,,,," नसीरुद्दीन ने कहा की मुझे जनता के बीच रहकर लोगों के अन्याय एवं अत्याचार जैसी कठिनाईयों को झेलना चाहिए । उनके विरोध में दान एवं बलिदान तथा क्षमा करना चाहिए ।" गुरु के इस आदेश पर अन्तिम सांस तक डटे रहे । कठिनाईयों से घिरे हुए शेख गए । लेकिन उनके मुख से एक शब्द की शिकायत न नहीं निकला । वे सुकून आकर से अटल रहे ।

शेख नसीरुद्दीन ने अपने सम्प्रदाय का कार्य बड़े कठिन समय में

करना पड़ा । अब दिल्ली सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी की दिल्ली न थी । जब स्वयं शेख नसीरूद्दीन के सुख को यह दशा थी कि हर भिखारी के पास एक लोई दो लिहाफ थे ।

अब यहाँ दिल्ली एक ऐसे सुल्तान के बदलते हुए आचार विचार का मैदान बना हुआ था जहाँ न्याय केवल नाम मात्र था देश की दशा दयनीय थी । ऐसे समय में एक साधु आध्यात्मिक सहानुभूति को फैलाने के लिए धैर्य एवं प्रकाशशाली मनुष्य की आवश्यकता थी । ऐसे समय में शेख नसीरूद्दीन एक कठोर चट्टान की तरह अपने स्थान पर खड़े रहे । विरोधियों के अनेक तीव्र एवं हल्के झटके आए । सुल्तान तुगलक ने उन्हें कठिनाईयाँ भी दीं । परन्तु उन्होंने गुरू के आदेश को सुरक्षित रखकर कभी व्याकुल नहीं हुए ।

प्रोफेसर मुहम्मद हबीब ने लिखा है कि शेख नसीरूद्दीन के मलफूजात (गोष्ठियों के विवरण) 'खैरूल मजालिस' का अध्ययन करते समय बिना प्रयत्न किए आँसू निकल आते हैं । इसमें तनिक सन्देह नहीं कि शेख नसीरूद्दीन के एक एक शब्द में करूणा को झलक है । जहाँ देखने में शेख नसीरूद्दीन की आँखों में आँसू की दिखाई पड़ते । वहाँ भी उनके शब्द ऐसे शोक एवं दुख में डूबे हुए हैं कि आँखों में बिना प्रयत्न किए डबडबा जाते हैं । यह समय के परिवर्तन के साथ - साथ राजनीतिकों की देन थी ।

इस प्रकार निरन्तर कठिनाईयों को सरलता पूर्वक झेलते हुए 1356 ई0 को शेख नसीरूद्दीन का देहान्त हो गया । उनका देहान्त वास्तव में चिश्ती परम्परा के प्रथम दौर की समाप्ति थी ।

चिश्तिया सम्प्रदाय के प्रथम दौर की समाप्ति और उसके कारण :- चिश्तिया सम्प्रदाय के इतिहास का वह समय जो शेख मोईनुद्दीन चिश्ती के आरम्भ हुआ था और शेख नसीरूद्दीन चिराग देहलवी पर समाप्त हो गया ।

चिश्तिया सम्प्रदाय एक केन्द्रीय निजाम था । उसी केन्द्र से सम्पूर्ण भारत के कोने कोने में आध्यात्मिक एवं व्यवहारिक जीवन का सुधार हुआ था । शेख अजमेरी, ख्वाजा काकी, बाबा फरीद, शेख निजामुद्दीन और शेख नसीरूद्दीन आदि के शिष्य एवं उत्तराधिकारियों ने देश के दूर-दूर के भागों में काम करते थे । परन्तु उनकी दृष्टि सदैव अजमेर, देहली एवं अजोधन की ओर लगी रहती थी वह अपने आप को एक केन्द्रीय निजाम के अन्तर्गत समझते थे ।

राज्य दरबारी सुल्तानों से किसी प्रकार का सम्बन्ध रखना आध्यात्मिक

विशेष सम्मान था ।, उनके किसी प्रकार की सहायता देना सम्भव नहीं — धर्म देना का अपमान था । कुरान की नौकरी की ओर अगर किसी ने उत्तराधिकारी का तनिक भी ध्यान दाते तो तुरन्त खिलजत मान्य(उत्तराधिकारीपद वापस ले लेते ।

शेख नसीरुद्दीन के पश्चात यह दोनों मौलिक नियम कुरान की कहानी बन कर रह गये । केन्द्रीय निजाम तबाह व बरबाद हो गया । सम्प्रदाय के अनेक नवयुवक मनुष्यों ने कुरान से सम्बन्ध स्थापित कर लिए जिसमें अधिकतर समय व्यतीत करने लगे । बाबा फरीद ने कभी पूर्व आदेश दिया था — अगर तुम अपने आध्यात्मिक केन्द्रों में उच्च स्थान चाहते हो तो सुल्तानों की सलाम की ओर मत देखो ।" इन आदेशों को भुलाकर देने का परिणाम यह हुआ कि सम्प्रदाय क्षीणता दिखने लगी और सन्तान में आपसी उत्पन्न हो गया । शेख नसीरुद्दीन की दुरदर्शी दृष्टि ने भविष्य की दशा का सम्पूर्ण प्रकार से अनुमान लगा लिया था । और इसी आधार पर उन्होंने किसी को अपना उत्तराधिकारी बनाना उचित नहीं समझा । उनके स्वर्गवास के पश्चात आध्यात्मिक केन्द्र की अधिक वृद्धि होने के कारण देश के विभिन्न प्रान्तों में आध्यात्मिक केन्द्र स्थापित हुए परन्तु चिश्तिया सम्प्रदाय के प्रथम आध्यात्मिक [illegible] केन्द्र समाप्त हो गई ।

द्वितीय अध्याय

चिश्ती परम्परा के हिन्दी सूफी कवियों का परिचय

सूफियों ने संक्षिप्त रूप से उपदेशों के द्वारा अपने मत का प्रचार बहुत कम किया। कभी उनकी सिद्धियों या करामातों का प्रभाव जनता पर पड़ता था, और कभी रमणीय प्रेम-तत्व से सम्बन्धित उनके काव्य से उनका प्रभाव व्यापक करने में सहायता पहुँचाई। काव्य के माध्यम से प्रेम के प्रभाव तथा महत्ता का प्रतिपादन कर काव्य 'रसात्मक काव्य' की सार्थकता इन सूफियों ने सिद्ध की है, और प्रेमकहानी की हृदय ग्राही परम्परा के द्वारा उन्होंने अपने विचारों का प्रचार करना आरम्भ किया।

फारसी के सूफी प्रेमकहानी में प्रेम-निरूपण आध्यात्मिक भाव की जो भाव-भूमियां हैं, वे हिन्दी प्रेमकहानी के रचयिताओं को प्रेरणा देती रही हैं। भारतीय प्रेमकहानी पर भारतीय वातावरण का गहरा प्रभाव पड़ा है।

चिश्ती परम्परा में अपने युग के महान हिन्दी कवि :-

(1) अमीर खुसरो जिन्हें हम अमीर खुसरो के नाम से जानते हैं।

(2) मौलाना दाऊद।

(3) शेख अब्दुल कुद्दूस गंगोही।

(4) मलिक मुहम्मद जायसी।

(5) कवि शेख अलफान।

फारसी की मसनवियों की तर्ज पर यहां प्रेमकहानी की लेखा दी गई है। उनमें से कुछ कहानियों को शैलियों के भीतर सूफियाना रंगमंच कर उनसे पहली फारसी के महान कवि निजामी ने अपनी अपूर्व प्रतिभा दिखलाई। निजामी की पांच मसनवियां हैं :-

(1) खुसरो-शीरीं। (2) लैला मजनूं। (3) मखजनुल असरार। (4) एकलमेकर (5) सिकन्दर नामा।

कवि निजामी का प्रभाव भारतीय सूफी कवि अमीर खुसरो पर पड़ा है। उन्होंने स्वीकार किया है "निजामी वह है जिसने शब्दों का अमृत बनाया और उनकी सारी उम्र उसी पूंजी में खर्च गई। उन्होंने काव्य में ऐसे भाव पेश किये हैं कि सारी आसमान में उसकी बुनियाद कायम की गई है। मेरे दिल में अरसे से यह ख्याल था कि उस बाग से फूल चुनूं, जिससे निजामी गुजरे हैं।"

उनके वाक्य की प्रशंसा करते हुये अमीर खुसरो ने कहा है " निशानी मैं उन बातों की नहीं छोड़ा है, जो कथनीय हैं । किसी गौहर को उन्होंने बिना बेधे नहीं छोड़ा है ।" ! हीरे की परख तो वास्तव में जौहरी को ही होती है ।

अमीर खुसरो का परिचय:--

अमीर खुसरो ऐसे ही [illegible] प्रतिभा के व्यक्ति थे । उनके पिता अमीर सैफुद्दीन मुहम्मद 13वीं शताब्दी के आरम्भ में खुर्द के एक कबीले 'लाचीन' के सरदार थे, चंगेजों के समय भारत पधारे और एटा जिले के पटियाली नामक ग्राम में रहने लगे । सौभाग्य से सुलतान शमसुद्दीन अल्तमश के दरबार में शीघ्र ही उनकी पहुँच होने के कारण सरदार बन गये । ये सभ्य एवं ईमानदार व्यक्ति थे अपना विवाह नवाब एमादुलमुल्क की पुत्री से हुआ, जिससे प्रथम पुत्र इज्जुद्दीन अलीशाह, द्वितीय पुत्र अब्दुलहसन (अमीर खुसरो) और तृतीय पुत्र किसमुद्दीन सुलतान ने जन्म लिया । इज्जुद्दीन को अरबी फारसी का विद्वान बताया जाता है । और उनके छोटे भाई किसमुद्दीन के सम्बन्ध में कहा जाता है कि उन्हें विद्या अथवा साहित्य से कोई रुचि न था । इन तीनों भाइयों में अब्दुल हसन अर्थात अमीर खुसरो सबसे अधिक तीव्र बुद्धि वाले थे । उनका जन्म 1253 ई० में हुआ था ।

जब खुसरो की आयु चार वर्ष की थी तब वह अपने पिता के साथ दिल्ली गये जहाँ उनके पिता ने अपने पुत्र की शिक्षा-दीक्षा का प्रबन्ध किया था । प्रारम्भिक शिक्षा एक मकतब में हुई । उनके प्रथम गुरु काजी असदुद्दीन मुहम्मद थे जो अपने समय के प्रसिद्ध सुलेख लेखक थे । जब अमीर खुसरो कुछ और बड़े हुये तब पिता सैफुद्दीन मुहम्मद खुसरो को सदुपदेश के लिये प्रसिद्ध सूफी साधक ख्वाजा निजामुद्दीन औलिया के चरणों पर अर्पित करने ले गये । खुसरो को गुरु से दीक्षा लेने की घटनायें अत्यन्त रोचक हैं " जब खुसरो निजामुद्दीन औलिया के दरबार पर पहुँचे, पिता से कहा आप भीतर जाइए, मैं बाहर बैठा रहूँगा । जब खुसरो के पिता भीतर गये तब खुसरो ने बैठे-बैठे दो पद बनाये और मन में विचारा कि यदि सूफी आध्यात्मिक बीज सम्पन्न होंगे तो वे मेरी मनकी बात जान लेंगे, और यहीं दरबार से मेरे पास उतर आयेंगे, तभी मैं भीतर जाकर उनसे दीक्षा प्राप्त करूँगा, अन्यथा नहीं । खुसरो के पद ये थे —

न जाँ ताई कि बर रियाने बहाराँ

कबूतर गर नशीनद बाज गरदद ।
खुसरो खुशकंद बर दर आमद
बयायद कंदरे या बाज गरदद ।।

अर्थात –'' तू ऐसा साधक है कि यदि तेरे प्रासाद की चोटी पर कबूतर भी बैठे तो तेरी कृपा से बाज बन जाये । एक दीन तेरे द्वार पर आया है । वह भीतर आये कि लौट जाये ? '' खुसरो अभी सोच में ही थे कि भीतर से सूफी निजामुद्दीन औलिया का एक सेवक आया और खुसरो के सम्मुख निम्न पद पढ़ा :–

बयायद कंदरे मारद कनीज़ ।
कि बाशद यकनफस हमराज गरदद ।।
अगर अज़ख़ुद बुवद आं मारद नादां।
बयां राहे कि आमद बाज गरदद ।।

अर्थात –'' हे सुख-कलनीनव, भीतर आओ ताकि कुछ समय तक हमारी रहस्य वाणी बन सकी । यदि आत्मसुख अज्ञानी है तो जिस राहे से आया है उसी राहे से लौट जाए । '' खुसरो ने जब यह पद सुना, आत्मविभोर हो उठे और तुरन्त भीतर जाकर सूफी निजामुद्दीन औलिया के चरणों पर नतमस्तक हो गये तब गुरु ने खुसरो को आध्यात्मिक दीक्षा दी ।[1] यद्यपि निजामुद्दीन औलिया की शिष्यता ग्रहण करने से पूर्व ही खुसरो कवि के रूप में प्रसिद्ध हो चुके थे किन्तु निजामुद्दीन औलिया के शिष्य बनने के बाद उनकी कविता में जो परिपक्वता एवं गंभीरता दृष्टिगोचर होती है वह पहले नहीं थी ।

वास्तव में प्रेम और भक्ति ही गुरु और शिष्य के बीच का वास्तविक संबन्ध सूत्र है । गुरु के प्रति शिष्य का आत्मार्पण जितना अधिक होगा गुरु-कृपा और तदनन्य वात्सल्य का भाव भी उतना ही उत्कृष्ट होगा । मौलाना रूमी का कथन है कि –'' मैं वात्सल्य में मोमबत्ती, विद्वान रूमी हुआ तब मैं अपने गुरु शम्स-तबरेज का दास(शिष्य) बना। ''[2] अमीर खुसरो के गुरु निजामुद्दीन औलिया वात्सल्यमय सहित -सौजन्य महापुरुष थे, प्रकृति से बड़े उदार थे ।

1- खजाइनुल-फुतूह – ख्वाजा हसनदेहलवी, पृ० 9
2- मसनवी मौलाना रूम – पृ० 55

शासकों से दूर रहना अपना धर्म समझते थे । आप कहा करते थे – '' मेरे घर के दो दरवाजे हैं । यदि शासक एक दरवाजे से आएगा, मैं दूसरे दरवाजे से निकल जाऊँगा ।'' सुलतान अलाउद्दीन ने एक बार खुसरो से कहा कि बिना आज्ञा माँगे हम निजामुद्दीन औलिया से जाकर भेंट करेंगे, तुम उनसे इसकी सूचना मत देना। खुसरो बड़े असमंजस में पड़े, लेकिन अन्त में जाकर गुरु से सब वृत्तान्त कह दिया यह सूचना सुनकर निजामुद्दीन औलिया नियाजपुर से अपने गुरु बाबा फरीद के पास अजोधन चले गये । जब सुलतान को यह सूचना मिली तो खुसरो पर बहुत नाराज हुआ और कहा –'' तुमने मुझे शेख (गुरु) से मिलने से वंचित किया । खुसरो ने उत्तर दिया – सुलतान के प्रोत्साहन देने से अकेला नौकरी जाने का भय था, परन्तु शेख (गुरु) के नाराज होने से ईमान (धर्म) जाने का भय था । इससे स्पष्ट होता है कि खुसरो दरबार से अधिक खानखाह को महत्व देते थे ।

अमीर खुसरो ने अपने गुरु निजामुद्दीन औलिया के वचनों तथा उपदेशों को '' अफजल फवाइद'' से संपादित किया । इसके अतिरिक्त पृथक खुसरो ने शेख (गुरु) की सेवा में अश्रद्धांजलियाँ प्रस्तुत किए हैं । शेख ने अवलोकन करके कहा – तुमने बढ़िया लिखा और पुस्तक का नामकरण भी उपयुक्त है । शेख ने इसमें कुछ परिवर्तन किया और अपनी गोष्ठी के लोगों के संबोधित करके कहा– वास्तव में खुसरो गर्व का विषय है कि उसने इतने अनेक विषयों को याद रखा और लिपि बद्ध किया । यद्यपि वह संपूर्ण रूप से सदा विचारों के सागर में निमग्न रहता है । ईश्वर ने खुसरो को शारीरिक अवयवों की शान और प्रज्ञा से भूषित किया है । वह रात-दिन विचारों के सागर में डूबा रहता है और हमारी बहुमूल्य रत्न निकाल लाता है । '' गुरु के इन उद्गारों को सुनकर खुसरो भावविभोर हुये और निवेदन किया कि – मेरी मेधा का श्रेय आप को ही है । आप के वरदान का ही यह फल है । [1]

<u>अमीर खुसरो का व्यक्तित्व</u> :– हिन्दी साहित्य के सर्व प्रथम ज्ञेय इतिहासकार ''गार्सा द तासी'' द्वारा किया गया अमीरखुसरो का उल्लेख सर्वाधिक प्रमाणिक एवं महत्वपूर्ण है । उन्होंने अपनी मूल फ्रेंच भाषा में सन् 1839 ई० में प्रकाशित

1- अफजलुलफवाइद — पृ० 100

' इस्तवार द ला लितरेत्युर फ्रैंसेज़ ऐ ऐंदुस्तानी,' शीर्षक इतिहास में खुसरो का जो विस्तृत परिचय दिया है उसका कुछ महत्व पूर्ण अंश इस प्रकार है --' दिल्ली के ख्वाजा अबुलहसन खुसरो भारत के बहुत बड़े कवियों में हैं । लोग इन्हें 'तूती-ए-हिन्द ' के नाम से पुकारते हैं। ---- खुसरो का जन्म 13वीं शती में हुआ सुल्तान मुहम्मद तुगलक के, जिनकी प्रशंसा में उन्होंने अनेक कसीदे लिखे, वे अत्यन्त प्रिय पात्र थे । वे सात शहंशाहों की सेवा में रहे और उनमें से कुछ के सहभोजी और मित्र भी हो गये । वे निजामुद्दीन औलिया के, जो स्वयं प्रसिद्ध फरीद शकरगंज के शिष्य थे, अध्यात्मिक शिष्य हो गये थे ।---- कहा जाता है खुसरो ने फारसी में 99 पुस्तकों की रचना की, गद्य में उतनी पद्य में, जिनमें लगभग 5000 छंद हैं । ------ उन्हें संगीत का भी अत्यन्त विस्तृत ज्ञान था । केवल अपने जीवन के अन्त में उन्होंने कुछ हिन्दुस्तानी पद्यों की रचना की, किन्तु इतने पर भी उनकी संख्या बहुत है । 'खालिक बारी' उनकी अत्यन्त प्रसिद्ध रचना है , जो मदरसों में शाम में लाई जाती है ।'' [1] 'गासी द तासी' ने अमीरखुसरो के सम्बन्ध में जो तथ्य दिये हैं वे वास्तव में महत्वपूर्ण हैं । खुसरो केवल आठवर्ष की अल्प आयु में निजामुद्दीन औलिया के शिष्य हो गये थे । शेख (गुरु) खुसरो से अत्यधिक प्यार करते थे । प्रायः खुसरो की प्रशंसा में कहा करते थे ''क्यामत के दिन जब पूछा जायगा कि निजामुद्दीन तू दुनिया से क्या लाया ? तो मैं खुसरो को पेश करूंगा '' निजामुद्दीन औलिया खुसरो पर गर्व करते हुये कहते हैं --- 'शरीअत में इजाजत होती तो मैं वसीयत करता, इसे भी मेरी कब्र (समाधि) में दफनाया जाय, जिससे हम करने के पश्चात भी साथ रह सकें । '

अमीर खुसरो उच्चकोटि के कवि एवं संगीतज्ञ थे । अध्यात्म में भी उनकी गहरी रुचि थी, इसलिये सूफी कवियों में उनकी शायरी (कविता) बहुत ऊँचे स्थान की है । उन्होंने गजल, कसीदा, और मसनवी प्रत्येक विद्या में अधिकार के साथ लिखा है । प्रसिद्ध इतिहासकार जियाउद्दीन बर्नी ने ' तारीख-ए-फिरोजशाही' में लिखा है --- '' अमीर खुसरो अपने साहित्य एवं विचारों की मौलिकता में अद्वितीय हैं । गद्य या पद्य के अन्य लेखक एक या दो विद्याओं में दूसरों से आगे जा पाये, परन्तु खुसरो तो हर एक में आगे आये । फारसी शायरी पर

बाबू शक्ति करने वाला एक ऐसा व्यक्ति भूतकाल में कभी हुआ नहीं और अब कयामत (प्रलय) तक होगा भी नहीं ।''

वास्तव में खुसरो का व्यक्तित्व बहुमुखी था । वे फारसी, तुर्की, अरबी के अतिरिक्त संस्कृत तथा भारतीय भाषाओं में भी निपुण थे । उन्हें भारतीय होने और भारत में जन्म लेने पर बड़ा गर्व था । 'गुर्रतुल कमाल,' के दीबाचे में अमीर खुसरो ने अपने आपको भारतीय तुर्क कहकर हिन्दवी की मिठास का उल्लेख किया है -- --

तुर्क-ए-हिन्दुस्तानीयम मन हिन्दवी गोयम चू आब
शकर-ए-मिसरी मदारम कज अरबगویम सुखन ।

अर्थात मैं हिन्दुस्तानी तुर्क हूँ, मैं हिन्दवी पानी की रवानी (गति) के साथ बोलता हूँ । मेरे पास मिस्र की शक्कर नहीं है कि मैं अरबी में शायरी करूँ । फारसी के अतिरिक्त अपनी हिन्दी रचनाओं के कारण अमीर खुसरो ने ईरान और भारत में प्रायः समान ख्याति प्राप्त की । बाबू श्याम सुन्दर दास के शब्दों में -- ' अमीर खुसरो खड़ी बोली के आदि कवि तो नहीं हैं क्योंकि उन्होंने हिन्दी तथा फारसी-अरबी में परस्पर आदान-प्रदान में भी सहायता पहुँचाई है ..। अमीर खुसरो को खड़ी बोली हिन्दी का प्रथम कवि कहा जाता है । स्वर्गीय रामचन्द्र शुक्ल दिनकर के शब्दों में -- ---'' जब हम खड़ी बोली के इतिहास को उठाते हैं तब निश्चय रूप से हमें मानना पड़ता है कि इस भाषा का प्राचीनतम लिखित साहित्य खुसरो का ही है ।[2] डा० राम कुमार वर्मा के अनुसार ---' खुसरो हिन्दी साहित्य के एक युग - परिवर्तनकारी कवि हैं, क्योंकि हिन्दी साहित्य का बड़ा उपकार किया है । जहाँ उन्होंने फारसी में अनेक मसनवियाँ लिखी वहाँ हिन्दी को भी नहीं भुलाया । उन्होंने खड़ी बोली हिन्दी में कविता कर मुसलमानी सल्तनतों का ध्यान हिन्दी की ओर आकर्षित किया ।[3] स्वर्गीय दिनकर जी का मत है कि खड़ी बोली को साहित्य की भाषा मुसलमानों ने ही बनाया । हिन्दी वाले कवियों का प्रभाव होते हुये एक खास परम्परा में बह रहे थे और इस परम्परा का जो मेल अवधी और ब्रज भाषा से बैठता था वह मेल खड़ी बोली से नहीं बैठता था ।[4] मध्य युग के रसकवियों के प्रधान योगदान को देखकर ही सहसा भारतेन्दु जी के मुख से निकल पड़ा - ---

---

[2] हिन्दी भाषा और साहित्य - बाबू श्यामसुन्दर दास पृ० 67
[3] [illegible] पृ० 270

इन मुसलमान हरिजन पर कोटिन हिन्दू वारिये ।

इस प्रकार खड़ी बोली को साहित्य की भाषा बनाने का श्रेय मुसलमानों और विशेष कर खुसरो को दिया जा सकता है ।

अमीर खुसरो का कृतित्व :— भारत के कण कण में जो कुछ था अमीर खुसरो को अत्यन्त प्रिय था । अपनी फारसी और हिन्दवी काव्य कृतियों में स्थान स्थान पर इस देश के प्रति अगाध प्रेम का ऐसा स्रोत प्रवाहित किया है जैसे उनकी रग रग बोल उठी हो । उनकी दृष्टि - सीमा का संसार जातिगत, देशगत और वर्गगत भेद भाव से मुक्त है । वे भारत की प्रशंसा करते हुए कहते हैं :—

किश्वरे हिंद अस्तवहिश्ती बजमी ।

(हिन्दुस्तान दुनिया में जन्नत है)

अमीर खुसरो के कृतित्व में तदयुगीन राजनीति, इतिहास, समाज , जनजीवन और देश की मिली जुली संस्कृति और सभ्यता की झाँकी झलकती है । ''तारीख फरिश्ता'' में अमीर खुसरो की लिखी पुस्तकों की संख्या 92 बताई है । इतिहास कार वर्नी ने लिखा है कि खुसरो ने गद्य और पद्य में एक पूरा पुस्तकालय लिख डाला था ।[1] अमीर खुसरो की उपलब्ध साहित्यिक रचनायें :—

(1) तुहफतुस्सिग्र (2) वस्तुलहयात (3) गुर्रतुलकमाल (4) बकीयतनकीय (5) निहायतुलकमाल (6) मतलउल अनवार (7) शीरी व खुसरो (8) मजनू व लैला (9) हश्तबहिश्त (10) आइनाए सिकन्दरी (11) रिसायेखुसरवी (12) एजाजेखुसरवी (13) अफजलुलफवायेद आदि फारसी में तथा खालिकबारी , पहेलियां, अनमेलियां, मुकरनियां, दो सुखने (हिन्दी) , दो सुखने (हिन्दी-फारसी) एवं ढकोसले हिन्दी में उपलब्ध होते हैं । ऐतिहासिक रचनाओं के अन्तर्गत 'किरानुस्सादैन', मिफताहुलफुतूह, खिज्रखाँ व देवलरानी, नुहसिपेहर, तुगलकनामा की गणना होती है । 'खजाइनुलफुतूह' या तारीखें अलाई' इनकी प्रसिद्ध गद्य रचना है ।

मौलाना शिबली अमीर खुसरो के कृतित्व के संबन्ध में विचार प्रकट करते हुए कहते हैं :— '' सादी और अमीर खुसरो ने बस (विशेष) ध्यान रखा है कि —

1- आदि तुर्क कालीन भारत — सैयद अतहर अब्बास रिजवी, पृ० 278

रोजमर्रा और आमबोलचाल को ज्यादा वुसअत (व्यापकता) दी जाय, सादी और खुसरो के कलाम में जो रवानी, चुस्तगी और सफाई पाई जाती है उसका एक बड़ा गुण यही है ।[1] डा० ताराचन्द ने अमीर खुसरो के साहित्य का मूल्यांकन करते हुये लिखा है — ''अमीर खुसरो के अदब (साहित्य) में 13वीं 14वीं सदी की सियासत, (राजनीति) समाजी जीवन शाही जशनों के दिल को गरमाने वाले नजारे, (दृश्य) राहेइश्क के पेचोखम, मुहब्बत के मस्तानों के राजोनियाज के तजकिरे हैं । आरजुओं के सुनहरी दुनिया की सैर है और नाकामियों की ट्रेजडी है, नसीहत है तसव्वुफ है, सब कुछ है ।[2] अमीर खुसरो ने फारसी मसनवियों में हिन्दी शब्दों के प्रयोग के अतिरिक्त फारसी-हिन्दी कोष 'खालिकबारी' का निर्माण तथा फारसी-हिन्दी की मिश्रित पदावली वाली रचनायें उन के सामाजिक दृष्टि कोण की परिचायिका हैं । उन्होंने शेर (फारसी) और गीत (हिन्दुई) को मिलाकर लिखने का प्रयोग किया जिसमें एक चरण फारसी शेर और दूसरा हिन्दी गीत का है । जिसका एक उदाहरण यहां दृष्टव्य है - - —

जे हाल मिस्की मकुन, तगाफुल, दुराये नैना बनाय बतियां ।
किताबे हिजरां न दारम ऐजां, नलेहुकहि लगाय छतियां ।।
शबाने हिजरां दराज चूं जुल्फ बरोजे वसलत चु उम्र कोताह ।
सखी पिया को जो मैं न देखूं, तो कैसे काटूं अंधेरी रतियां ।।[3]

इसके अतिरिक्त खुसरो की हिन्दी पहेलियां, नाखून काटने पर कहा है —

चोरी की 'नाखून' किया, वाका सर क्यों काट लिया ।
बीसों का सरकाट लिया, नामारा ना खून किया ।।

निम्न पहेली में मुरलीधर कृष्ण की छवि का सजीव चित्रांकन करके कवि ने हिन्दी जीवन के प्रति आत्मीयता का परिचय भी दिया है —

श्याम बरन पीताम्बर बांधे मुरलीधर ना होय ।
बिना मुरली की नाद करत हैं बिरला बेटे कोय ।।

निम्न पहेली में गुरु चेले की बात है । तत्कालीन समाज में साधु रूप में पाप करने वाले पर व्यंग है —

सरपर गट्ठा गले में झोली किसी गुरु का चेला है ।
भर - भर झोली घर को धाये, उसका नाम पहेला है ।।

1- खियाले खुसरो — मौलाना शिबली, पृ० 46
2- अमीर खुसरो सम्बन्धी व्याख्यान माला — डा० ताराचन्द
3- अमीर खुसरो और उनकी हिन्दी शायरी (1961) डा०खुशहाल जैदी, पृ० 70।

अमीर खुसरो की हिन्दवी रचनाओं का सर्वप्रथम संकलन 'खालिक बारी खुसरवी' नाम से सन् 1918 ई० में मौलाना रशीद अहमद 'सालिक' ने अलीगढ़ से प्रकाशित किया था, जो अब सर्व सुलभ नहीं रहा है । दूसरा संग्रह 'खुसरो की हिन्दी कविता' शीर्षक से भी प्रभुदयाल द्वारा सम्पादित होकर नागरी प्रचारिणी सभा काशी से सन् 1922 ई० में प्रकाशित हुआ था । खुसरो के नाम से प्राप्त हिन्दवी रचनाओं का कोई प्रामाणिक संग्रह आज उपलब्ध नहीं है । प्राप्त सामग्री 'दिवान' (नोट-बुक) अर्थात व्यक्तिगत संग्रह के रूप में ही मिलती हैं । डा० सुनीति कुमार चाटुर्ज्या का मत है कि — अमीर खुसरो के नाम से चलते कई छोटे-छोटे गीत, दोहे, पहेलियाँ एवं प्रेमगीत वास्तव में उन्हीं की मौलिक रचनायें हो सकती हैं । ये सारे 14वीं शताब्दी के रचे हुये और इस दृष्टि से हिन्दी के कुछ प्राचीनतम नमूने में से हैं ।[1] डा० रामधारी सिंह दिनकर अपनी पुस्तक संस्कृति के चार अध्याय में एक स्थान पर लिखते हैं — यहाँ की जनभाषा (हिन्दुई) खुसरो के ध्यान पर ऐसे चढ़ गई, इस का कारण यह हो सकता है कि खुसरो परदेसी होने के कारण यहाँ के साहित्य से इतने परिचित नहीं रहे होंगे कि उसकी परम्परा उन पर आतंक जमाती, अपने मुक्त भाव तो वह फारसी में लिखते थे । हाँ जनता के मनोरंजन के लिये कुछ चीजें यहाँ की भाषा में भी कहीं ।''

भौगोलिक दृष्टि से मध्ययुगीन मुस्लिम कवियों के योगदान को हम दो भागों में विभाजित कर सकते हैं —

(1) उत्तरी भारत के कवि ।

(2) दक्खिनी के कवि ।

उत्तर भारत के मुस्लिम कवियों की काव्यधारा भी दो प्रकार से प्रवाहित हो रही थी ——

(क) प्रेमाख्यानक काव्य ।

(ख) मुक्त काव्य ।

अमीर खुसरो के काव्य का प्रभाव इन दोनों ही काव्य धाराओं पर दृष्टिगोचर होता है ।

(क) प्रेमाख्यानक काव्य — अमीर खुसरो ने यद्यपि फारसी के उच्च कोटि के कवि थे और फारसी में उन्होंने अनेक मसनवियाँ लिखी थी ।[2] इन मसनवियों का प्रभाव

1- प्राचीन कवि भाषा और हिन्दी - डा० चाटुर्ज्या, पृ० 187

निस्सन्देह हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यानकों पर भी प्रत्यक्ष नहीं तो परोक्ष से अवश्य पड़ा होगा । अमीर खुसरो के समकालीन कवि कुतुबनाम द्वारा 'मृगावती' ग्रन्थ की रचना अवश्य ही हिन्दी शैली में मसनवियाँ लिखे जाने का एक प्रयोग है जो आगे चलकर अवधी भाषा में अनेक प्रेमाख्यानकों के लिखे जाने का प्रेरणा स्रोत बना । इसके समर्थन में श्रीपरशुराम चतुर्वेदी की ये पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं —

"कुतुबनाम के समकालीन अमीर खुसरो ने कई मसनवियाँ लिखी थी । बहुत सम्भव है कुतुबनाम ने भी उसी पद्धति पर अपनी काव्य रचना की हो ।"[1]

इस प्रकार हिन्दी में मसनवियाँ लिखने की परम्परा पर खुसरो का प्रभाव माना जा सकता है ।

<u>सूफी काव्य</u> :— अमीर खुसरो जैसे दूरदर्शी विद्वान को जनमानस तक पहुँचने के लिये जनसुलभ गीतमयी पड़े, जो इतने लोकप्रिय हुये कि आजतक जनजन की जिह्वा पर मौजूद हैं । हिन्दू और मुसलमानों के लिये पारस्परिक द्वेष त्यागकर समन्वय स्थापित करने के लिये प्रेम और सौहार्द की आवश्यकता थी जो सूफी सन्त द्वारा सुगमता से हो सकती थी । जो राम और रहीम में भेद न करके मानवता का सन्देश दे। बाबा फरीद , अमीर खुसरो, अब्दुल कुद्दूस गंगोही, कुतुबनाम , जायसी, कबीर , रहीम, रसखान, रसलीन आदि सैकड़ों वाणियाँ इसी स्वर में मुखरित हुई थी । जिनसे हिन्दी साहित्य आज तक रसप्लावित है ।

<u>दक्षिणी हिन्दी काव्य</u> :— अमीर खुसरो का दक्षिणी हिन्दी काव्य पर सबसे अधिक और प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा था । कहा जाता है कि अमीर खुसरो दक्षिण में आये थे । उन्होंने देवगिरि और वारंगल का वर्णन किया है ।[2] कुतुबशतकी की काव्यमयी रचना 'अनरस' में अमीर खुसरो का यह दोहा उद्धृत है :—

> पंखा होकर मैं डुली साती तेरा वाव ।
> मुझ जलती की जन्म गयी तेरे लेखन वाव ।।[3]

दक्षिणी हिन्दी के कवियों ने भी अमीर खुसरो द्वारा इस भाषा के लिये प्रयुक्त नाम 'हिन्दी' अथवा 'हिन्दवी' का ही अधिकतर प्रयोग किया है । कई मसनवियों के नाम भी जैसे - लैला मजनूं आदि भी अमीर खुसरो से प्रभावित होकर दीखते हैं । गजलों का विकास भी सर्वप्रथम दक्षिणी में ही हुआ था ।

1- हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास, चतुर्थ भाग, पं० परशुराम चतुर्वेदी, पृ० 30
2- दक्षिणी का पद्य और गद्य — डा० श्रीराम शर्मा, पृ० 29
3- अनरस — सम्पादक डा० श्रीराम शर्मा, पृ० 153

इस प्रकार अमीर खुसरो एक कुशल प्रवक्ता, देशभक्त और जनकवि थे, जिन्होंने अपने अर्थों में देश और साहित्य की अभिन्नता का मार्ग दिखाया। वे बहुमुखी प्रतिभा के व्यक्ति और मध्यकालीन संस्कृति के विशिष्ट प्रतिनिधि थे।[1] वे निस्सन्देह खुशी - ए - हिन्द थे जिनपर सारे राष्ट्र को गर्व है। स्वयं अमीर खुसरो के शब्दों में—

खुसरो दरिया प्रेम का करी वूं खुसरो खून।
सखगरी मोखा तरी - जो खोजा खून ।

(इसकी तसदीक यह है कि)''इस प्राचीन आकाश के नीचे खुसरो जैसा कोई भी देश साहित्यकार नहीं, अथवा कहा नहीं, वह हिन्दुस्तानी है।[2]

सुल्तान निजामुद्दीन औलिया का जिस समय देहान्त हुआ, उस समय अमीर खुसरो सुल्तान गयासुद्दीन तुगलक के साथ बंगाल गये हुए थे। जब उन्हें अपने गुरु की मृत्यु की सूचना मिली तो कहा जाता है कि पागल की भाँति वहाँ से चिल्लाते हुए दिल्ली आए और गुरु की समाधि की ओर दौड़े। जब अपने गुरु को चिरनिद्रा में देखा तो कहा ——

'खुदावन्दताब, आफताब गर्क शुद जमी ओ खुसरो जिन्दा।'

अर्थात :— भगवान की प्रशंसा हो, सूर्य अस्त हो गया और खुसरो जीवित है। वेदना से अवसन्न सिर गुरु की समाधि पर दे मारा और हिन्दी का निम्नलिखित दोहा रचा, यह भाषा और भाव की दृष्टि से सरल, सुकोमल, सरस, कर्मभरी तथा करुणा पूर्ण था। पढ़ते हुए बेहोश होकर गिर पड़े :—

गोरी सोवे सेज पर, मुख पर डारे केस।
चल खुसरो घर आपने, रैन भई चहुं देस ।।

(यह घर 'हजरत निजामुद्दीन का निवास-गृह था। सरु पेड़ के समान मस्त चाल चलने वाली मेरी स्वामी के आवागमन का यह मार्ग है।)

इस के अनन्तर अमीर खुसरो के पास जो कुछ धन संपत्ति थी, उसे लुटा दिया और स्वयं समाधि पर काला कपड़ा पहन कर जा बैठे। रीति-रीति यह एक ही बात कहती थी कि आफताब (सूर्य) बुझी में डूब गया और उसकी किरणें सिर धुनती फिरें। गुरु के देहान्त से इतना दुखी थे कि छः मास के अन्दर 1325 ई० में अमीर खुसरो का भी देहान्त हो गया।[1] उनकी समाधि भी निजामुद्दीन औलिया के चरणों के निकट

1- हिन्दी विश्व कोश खंड प्रथम काशी नागरी प्रचारिणी सभा-1990 पृष्ठ 199
2- खुसरोपरचा, अध्याय तीन (10)

है । प्रतिवर्ष अमीर खुसरो की उपरोक्त दोहे से उर्स आरम्भ होता है । निजामउद्दीन औलिया के दर्शन जो यात्री जाते हैं नियमानुसार, पहले शिष्य की समाधि पर जायें बाद में गुरु निजामउद्दीन औलिया की समाधि पर । गुरु द्वारा शिष्य के प्रति ऐसा स्नेह और सम्मान अन्यथा दुर्लभ है । अमीर खुसरो एक महान सूफी के शिष्य होकर सदा के लिए संसार की आँखों में आदर और सत्कार के पात्र बन गये । उनकी समाधि पर हिन्दू, मुस्लिम, सिख एकत्र होकर श्रद्धा के पुष्प अर्पित करते हैं ।

बलिहारी गुरु आपने, घड़ि घड़ि सौ सौ बार ।
मानुस से देवता किया, करत न लागी बेर ।।

अमीर खुसरो का महत्व तथा प्रभाव :— अमीर खुसरो सर्वतोमुखी प्रतिभा के व्यक्ति थे । वे कुशल, सैनिक, महान कवि, सफल गद्यकार और उच्चकोटि के संगीतज्ञ थे । भाषा के क्षेत्र में उनकी महानता का परिचय इस तथ्य से सहज ही मिल जाता है कि उन्होंने अपने काव्य के लिए लगभग 700 वर्ष पूर्व जिस खड़ी बोली हिन्दी का प्रयोग किया था प्रायः उसी का परिविष्ठित रूप आज इस देश की राष्ट्र भाषा के रूप में स्वीकृत है ।

अमीर खुसरो की भाँति ही अनेक मुस्लिम कवियों ने यहाँ की भाषा को ही अपने काव्य का माध्यम बनाया था जिसके फलस्वरूप हिन्दी का स्वाभाविक विकास हुआ और यह भाषा वास्तविक रूप में एकता और सौहार्द, प्रेम और सौन्दर्य की भाषा बनी । अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' जी ने भी स्वीकार करते हुए कहा— ''मध्यकाल में मुसलमान अनेक उद्देश्यों से हिन्दी भाषा की ओर आकर्षित हो गये थे। ऐसे मुसलमानों में अग्रगण्य, मैं अमीर खुसरो को मानता हूँ ।[1] हिन्दी शब्द के जन्मदाता और खड़ी बोली के आदि कवि माने जाने वाले अमीर खुसरो एक साथ महान पंडित और महान प्रेमी थे । पांडित्य और प्रेम का ऐसा सुभग समन्वय अन्य किसी कवि में देखने को नहीं मिलता । इसलिए कि फारसी के सूफी कवियों में भी उन्हें बड़ा ऊँचा स्थान प्राप्त है । जिस किसी साहित्य-रूप को उनकी प्रतिभा का स्पर्श मिला वह जीवंत और प्राणवान हो उठा । कवि ने अपने काव्यों में ग्यासुद्दीन बलबन से लेकर मुहम्मद तुगलक तक अपने अनेक आश्रयदाताओं की प्रशंसा की, परन्तु पृथक भाव से ही सम्मिलित होते थे । अमीर खुसरो एक स्थान पर लिखते हैं — यद्यपि मैं शाहों और शहजादों की प्रशंसा में लिखता रहा हूँ तथापि मेरा हृदय

1- हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास — 'हरिऔध' पृ0 106

आध्यात्मिक क्षेत्र में ही आनन्द लेता रहा है । इस प्रकार यदि हम अमीर खुसरो के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर एक सूक्ष्म दृष्टि डालते हैं तो ज्ञात होता है कि खुसरो भौतिक साधनों से युक्त होते हुए भी मन और आत्मा से सूफी थे । खुसरो की बहु-मुखी प्रतिभा का परिचय उनके संगीतज्ञ रूप से भी मिलता है । उनकी यह उपलब्धि सामान्य नहीं थी ।

इस महान लोकप्रियता के आधार पर यह कहा जा सकता है कि खुसरो अत्यंत उच्चकोटि के बहुज्ञ, बहुश्रुत एवं अनुभव सम्पन्न महान सूफी थे जिनकी रचनाएं सात सौ वर्ष बीत जाने पर भी आजतक भारत की जनता का कंठहार बनी हुई हैं । सम्पूर्ण मानव - जाति के लिए मानवता वादी अमीर खुसरो की यह सब से बड़ी देन है । इस लिए वे जन - समाज के आराध्य हैं । मौलाना अबुल कलाम आजाद ने ठीक ही कहा था ----'' भारत ने सात सौ वर्षों की अवधि में अमीर खुसरो जैसे प्रतिभावान, अप्रतिम दूसरे किसी विद्वान को जन्म नहीं दिया श्रेष्ठ सूफी होने के साथ वे महान कवि , लेखक, भाषाविद् और संगीत शास्त्री के महान विशेषज्ञ थे । '

1- तजकिरये निजामी, पृ० 77 लेखक (ख्वाजा हसन सानी)

मौलाना दाऊद का परिचय :— अमीर खुसरो का प्रभाव निस्सन्देह हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यानकों पर भी प्रत्यक्ष नहीं तो परोक्ष रूप से अवश्य पड़ा होगा । अमीर खुसरो के समकालीन कवि मौलाना दाऊद द्वारा चन्दायन की रचना किया जाना अवश्य ही हिन्दी शैली में मसनवियाँ लिखे जाने का एक सफल प्रयोग है जो आगे चलकर अवधी भाषा में असंख्य प्रेमाख्यानकों के लिखे जाने का प्रेरणा-स्रोत बना । इस के समर्थन में श्री परशुराम चतुर्वेदी जी की ये पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं —— '' मुल्ला दाऊद के समकालीन अमीरखुसरो ने कई मसनवियाँ लिखी थी । बहुत सम्भव है, मुल्लादाऊद ने भी उसी पद्धति पर अपनी काव्य रचना की हो ।''[1]

चंदायन का रचना काल तथा कवि का परिचय :— सूफी प्रेमाख्यानों की परम्परा हिन्दी में अमीर खुसरो के बाद ही मौलाना दाऊद का नाम उनकी कृति 'चंदायन' के कारण अत्यधिक प्रसिद्ध है । चंदायन के रचयिता मौलाना दाऊद उत्तर प्रदेश के रायबरेली जिले के डलमऊ के निवासी थे ----- --

डलमऊ नयर बसै नौरंगा ,
उपर कोट सरै बह गंगा ।[2]

उनका समसामयिक बादशाह फिरोजशाह तुगलक था ——

साह फिरोज दिल्ली सुलतानू,
जौना साहि नजीर बरवानू ।[3]

डलमऊ के प्रसंग में गजेटियर में लिखा गया है कि '' फिरोजशाह तुगलक ने यहाँ मुस्लिम धर्म और विद्या के अध्ययन के लिए एक विद्यालय की स्थापना की थी । इसकी उपयोगिता इस बात से प्रकट है कि डलमऊ के मौलाना दाऊद नामक कवि ने सन् 719 हि० (1355 ई०) में भाषा में चन्देनी नामक ग्रन्थ का सम्पादन किया''।[4] यद्यपि यह बात अब सिद्ध हो चुकी है कि 'चन्दायन' की रचना 781 हि० (1379 ई०) में हुई और उसके रचयिता मौलाना केवल सम्पादक मात्र नहीं, तथापि गजेटियर की यह सूचना महत्व की थी कि मौलाना दाऊद डलमऊ के थे और लोक प्रचलित चनेनी को उन्होंने अपने काव्य का आधार बनाया । मौलाना दाऊद ने अपनी रचना का वर्णन स्वयं किया है :——

1- हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास, चतुर्थ भाग, सं०पं०परशुराम चतुर्वेदी पृ०30
2- चंदायन — माता प्रसाद गुप्त, आगरा, 1967, छन्द 17/3
3- वही -- 17/2
4- गजेटियर आफ प्रविंस आफ अवध, भाग 1 (1858 ई०) पृ० 355

बरस सात (त) हैं बीये ख्याली ।
सिद्धि पाव कवि बरसे (स) उपाली ।।[1]

गुरु परम्परा :— मौलाना दाऊद शेख नसीरुद्दीन चिराग देहलवी के भानजे एवं खलीफा (उत्तराधिकारी) शेख जैनुद्दीन के मुरीद (शिष्य) थे ।[2] उन्होंने अपने गुरु की स्तुति 'चंदायन' में की है ———

शेख जैनदी तौं पखिलावा ।
बरम पंथु सिद्ध पाइ मेलावा ।।[3]

शेख जैनुद्दीन के सम्बन्ध में अकबर कालीन ग्रन्थ मआसिरुल उमरा में लिखा है — '' शेख जैनुद्दीन, शेख नसीरुद्दीन चिराग देहलवी के भानजे व खलीफा (उत्तराधिकारी) हैं । उनके विषय में शेख के मल्फूजात (प्रवचन का संग्रह) और मकतूबों (चिट्ठियों) में पाया जाता है । मौलाना दाऊद जो 'चंदायन' के लेखक हैं उनके मुरीद (शिष्य) हैं और चंदायन के प्रारम्भ में उन्होंने उनकी प्रशंसा की है। उनकी समाधि उस गुंबद में है जो शेख नसीरुद्दीन चिराग देहलवी के पास्ते हैं जो उनके चरण के अवशेष में हैं ।''[4]

अमीर खुसरो द्वारा संग्रहीत शेख नसीरुद्दीन चिराग देहलवी के मल्फूजात (प्रवचन संग्रह) 'खैरुल मजालिस' में भी शेख जैनुद्दीन का उल्लेख आता है — ''चिराग देहलवी ने अपने भानजे जैनुद्दीन से कहा कि दीवारों (भित्तियों) की फूल बीट दो । उन्होंने सामने से फूल उठा लिए जो लाल और सफेद थे ।''[5] इस प्रकार मौलाना दाऊद के गुरु शेख जैनुद्दीन ने अपने शिष्य के हृदय में जो प्रेम का दीपक जलाया था उनकी प्रेरणा से ही मौलाना दाऊद ने 'चन्दायन' ग्रन्थ की रचना की थी ।

मौलाना दाऊद की साधना पद्धति :— मौलाना दाऊद के 'चन्दायन' ने हिन्दी सूफी काव्य को ही उन्नति दी थी, साथ ही मुसलमानों में हिन्दवी के प्रति भी आकर्षक रुचि उत्पन्न कर दी । इसका मुख्य कारण मौलाना दाऊद की प्रतिभा है । सूफियों में तो चन्दायन अत्यधिक प्रसिद्ध थी ही, मुल्लाओं में भी इसकी चर्चा चलने लगी । अकबर के राज्य काल के एक मुख्य इतिहासकार एवं अकबर के वीर

---

1. चंदायन (डा० माता प्रसाद गुप्त) छंद 17/1
2. मआसिरुल उमरा , पृ० 152
3. चंदायन (डा० माता प्रसाद गुप्त) छंद 9/1
4. मआसिरुल उमरा — इसमें 225 भारतीय सूफी सन्तों का जीवन चरित्र दिया गया है । इसके लेखक शेख मोहीउद्दीन देहलवी हैं जो अकबर के समय में थे । पृ० 152 , 53
5. खैरुल मजालिस — पृ० 159

विरोधी मुल्ला अब्दुल कादिर बदायूंनी ' मुन्तखबुत्तवारीख' में जिसकी रचना उन्होंने अकबर के राज्यकाल के अन्त में की, लिखते हैं —— ''772हि0/1370-71ई0 में खाने जहाँ बजीर का निधन हो गया । उसके पुत्र जौनाशाह को उसके पिता की उपाधि प्रदान हुई । मौलाना दाऊद ने ' चंदायन' नामक हिन्दवी भाषा की मसनवी उसे समर्पित की । इसमें लोरक और चन्दा नामक प्रेमी और प्रेमिका की प्रेम कथा का उल्लेख है । वास्तव में यह मादन भाव से अत्यधिक परिपूर्ण है । यह इतनी अधिक प्रसिद्ध है कि इस प्रदेश में इसके परिचय की आवश्यकता नहीं । दिल्ली में मखदूम शेख तकीउद्दीन आरजअवानी (ईश्वर के प्रति निष्ठावान भाषणकर्ता) उसके पद्य विभिन्न प्रसंगों में मिम्बर (मस्जिद के मंच) से पढ़ते थे । अब उनके समकालीनों ने इस मसनवी को इस प्रकार महत्व देने का उनसे कारण पूछा तो उन्होंने उत्तर दिया कि इस में आध्यात्मिक तथ्यों के उल्लेख है और जिन लोगों ने अलौकिक रहस्यों का आस्वादन किया है, वे इससे अत्यधिक प्रभावित होते हैं । इस में दैवी प्रेम उल्लेखित होता है और इस पुस्तक का कुरआन की आयतों से सामंजस्य भी होता है।[1]'

मुल्ला अब्दुल कादिर बदायूनी के समय में भी हिन्दी के मधुर गायकों के बीच ' चन्दायन ' की लोकप्रियता प्राप्त थी । शेख अब्दुल कुद्दूस गंगोही ने अपने दो पत्रों (मकतूबात) में, जिनमें एक शेख जलाल थानेसरी के नाम है और दूसरा शाह मुहम्मद के नाम है, 'चन्दायन' से एक एक उदाहरण दिये हैं । शेख जलाल थानेसरी के नाम, हिन्दी पाठ इस प्रकार है :——

बिनु करिया मोरि डोलई नावा ।
नयन क्यार ? कंथ नहिं आवा ।।[2]

डा0 माता प्रसाद गुप्त ने द्वितीय चरण का पाठ — 'निगुन गारा (करिया) कंत न आवा' किया है ।[3]

शेख मुहम्मद के नाम पत्र का हिन्दी उदाहरण इस प्रकार है :——

'उटऊ'बीर जउ उटवई पारसि ।
सुरध पंथ जउ बहुत संभारसि ।।[4]

डा0 माता प्रसाद गुप्त ने सुरध के स्थान पर सरग पाठ किया है ।[5]

1- मुल्लाअब्दुलकादिर बदायूंनी — मुन्तखबुत्तवारीख, भाग 1(कलकत्ता 1865-69 पृ0 250
2- मकतूबाते शेख अब्दुल कुद्दूस गंगोही (अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय की हस्तलिखित) पत्र संख्या 103, पृ0 319
3- चंदायन, पृ0 50, कडवक 53
4- मकतूबाते कुद्दूसिया (देहली, 1870 ई0, पत्रांक 130, पृ0 255)
5- चंदायन, पृ0 180, कडवक 185

'लताएफ़े कुद्दूसी' में यह भी संकेत मिलता है कि शेख अब्दुल कुद्दूस गंगोही ने रुदौली में ही 'चन्दायन' के छंद-बद्ध फ़ारसी रूपान्तर का महत्वपूर्ण कार्य प्रारम्भ किया जिसे सुल्तान बहलोल लोदी एवं सुल्तान हुसैन शर्की के युद्ध के समय (1483-84 ई०) तक बहुत कुछ लिख भी लिया था किन्तु यह कार्य भी उसी भ्रान्ति की भेंट हो गया ।[1] 'चन्दायन' का अनुवाद करते समय आपने यह अनुभव किया कि इसमें ईश्वर तथा उसके नबी हजरत मुहम्मद की स्तुति तो की गई है, किन्तु 'मेराज'[2] का उल्लेख नहीं है । फलस्वरूप इस विषय पर कुछ लिखने की इच्छा हुई । आपने यह मिसरा लिखा :—

लैलते इसरा कि ज मेराज उस्त ।

(अर्थात् —— इसरा की रात जिससे उनकी मेराज (संबंधित) है)

दूसरा चरण लिखने का विचार कर ही रहे थे कि उन्होंने परोक्ष से यह आवाज सुनी जो की रही थी कि लिख दो :——

नूरे खुदावन्दे जहाँ ताजे उस्त ।

(अर्थात् —— संसार के खुदा की ज्योति उसका मुकुट है ।)

लताएफ़े कुद्दूसी में मेराज के विषय और फ़ारसी के चार शेर उद्धृत किए गये हैं । तत्पश्चात तीन फ़ारसी शेर उद्धृत हैं जो चन्दायन के निम्नांकित छंदों के अनुवाद स्वरूप हैं । उदाहरणार्थ मूल पाठ के साथ शेख साहब के फ़ारसी पद्यानुवाद को देखा जा सकता है । यथा :——

चन्दायन का हिन्दी पाठ :—

ऊँच बिरिख फरु लाग अकासा । दाथ चढ़े कई नाहीं आसा ।।
कहु जोगत को बाँध पसारे । तरुवर डाल हुवे को पारे ।।
राती दिवस बहुत रखवारा । नयन देख जाई सो मारा ।।[3]

शेख अब्दुल कुद्दूस का फ़ारसी पद्यानुवाद :—

शजरे बलन्दस्त समर दरसमा । दस्त उमीदस्त बरन्न दस्ती मा ।।
ज दर के रा दस्त फ़राजी कुनद । शाखे फ़लक दस्त बाजी कुनद ।।
रोजो शबे गस्ता निगहबाँबसे । कस्तः शबद चूँके बेबीनद कसे ।।[4]

इस प्रकार हम देखते हैं कि चंदायन की अपूर्व लोकप्रियता के कारण हिन्दी

1- लताएफ़े कुद्दूसी, पृ० 100
2- 'मेराज' अरबी शब्द है जिसका अर्थ है सीढ़ी अथवा ऊपर चढ़ने का साधन मुस्लिम आस्था के अनुसार हजरत मुहम्मद का अर्श पर पहुँचकर ईश्वर से साक्षात्कार करना 'मेराज' है ।
3- चन्दायन - डा० माता प्रसाद गुप्त, पृ० 54 तथा 56

में कुतुबन, मंझन, जायसी, उसमान आदि अनेक श्रेष्ठ कवि उत्पन्न हुए और प्रेमाख्यानक काव्यों की एक स्वस्थ परंपरा का स्थापन हो गया ।

डा० माता प्रसाद गुप्त ने 72 पृष्ठों की एक भूमिका दी है, जिसमें मौलाना दाऊद के समसामयिक, चन्दायन का रचनाकाल और उसके कवि के वास-स्थान पर विचार किया गया है । रचना का नाम-रूप, रचना की कथा का आधार और रचना के सन्देश पर भी भूमिका में विस्तार से विवेचन प्रस्तुत किया गया है । रचना के सन्देश में सूफी प्रेम के मरण मार्ग पर गम्भीरता पूर्वक विचार करते हुए लेखक ने चन्दायन को सूफी रचना के रूप में स्वीकार किया है — 'यह मरण' ही लौरिक की प्रेम यात्रा का सबसे बड़ा सम्बल है, यही हिन्दी सूफी प्रेम-कथाओं में प्रेमी को अमरत्व प्रदान करता है, इस मरण के आधार पर ही प्रेमी काल से भी नहीं डरता क्योंकि उस में विश्वास होता है कि मरे हुए को काल भी नहीं मारता है । इसी कारण मरण को जायसी ने 'उपकार' की संज्ञा से अभिहित किया है। जो दशा लौरिक की यहाँ पर सौन्दर्य के साक्षात्-दर्शन से हुई है, वही रत्नसेन की शुक द्वारा पद्मावती के सौन्दर्य-वर्णन को सुनकर होती है ।[1]

डा० परमेश्वरी लाल गुप्त को 'चन्दायन' में सूफी तत्व नहीं मिले, उनका कथन है :— "इस प्रकार स्पष्ट है कि दाऊद के समुख काव्य रचना के समय कोई सूफी दर्शन नहीं था, लोक प्रचलित कथा को काव्य रूप में उपस्थित करना ही अभीष्ट था ।[2]

डा० परमेश्वरी लाल जी का यह दृष्टिकोण सूफी काव्य परम्परा और दर्शन के अध्ययन के अभाव के कारण ही बना है । सूफी - प्रेम दर्शन का समस्त परिपार्श्व 'चन्दायन' काव्य में प्रस्तुत किया गया है । प्रेम का ' मरण-मार्ग', नख-शिख' आदि में अलौकिक सौन्दर्य का संकेत, नायक और बाहुर आदि की मुद्राएँ सभी सूफी तत्वों की ओर स्पष्ट संकेत करती हैं ।

'चन्दायन' की रचना के प्राप्त छन्दों का एक पाठ डा० माता प्रसाद गुप्त ने सन् 1962 ई० में, हिन्दी तथा भाषा विज्ञान पीठ, आगरा से प्रकाशित कराया था । डा० माता प्रसाद गुप्त जी को उस समय केवल चार खंडित प्रतियाँ प्राप्त थीं । वे क्रमशः कलाभवन काशी, मनेर शरीफ (बिहार) तथा शिमला संग्रहालय की थीं ।

1- 'चन्दायन' - - - डा० माता प्रसाद गुप्त, पृ० 40
2- 'चन्दायन' ———डा० परमेश्वरी लाल गुप्त परिचय, पृ० 64

डा० माता प्रसाद गुप्त इस संस्करण में केवल 80 छन्दों का उद्धार कर सके थे। इसी संस्करण में भोपाल की एक खंडित प्रति के 64 छन्दों का पाठ डा० विश्वनाथ प्रसाद ने भी प्रस्तुत किया था। इस प्रकार 'चन्दायन' के अध्ययन की एक भूमिका सन् 1962 ई० में तैयार हो गई थी। सन् 1964 ई० में डा० परमेश्वरी लाल गुप्त ने बम्बई से एक अन्य संस्करण प्रकाशित कराया था जिसमें उन्होंने मैनचेस्टर के रीलैंडस पुस्तकालय में प्राप्त एक वृहद पाठका उपयोग किया। उनके समक्ष बम्बई, मनेर शरीफ (बिहार) पंजाब और काशी की खंडित प्रतियाँ तथा अमरीका के कैम्ब्रिज-संग्रह (हारवर्ड) के दो पृष्ठ भी थे। डा० परमेश्वरी लाल गुप्त ने वैज्ञानिक ढंग से सम्पादित पाठ प्रस्तुत करने का प्रयास नहीं किया। 'चन्दायन' की भूमिका में उन्होंने स्वीकार किया है :——

''प्रस्तुत प्रयत्न ग्रन्थ की उपलब्धि सामग्री को फारसी लिपि से नागराक्षरों में प्रस्तुत कर उन्हें क्रमबद्ध कर देने तक ही सीमित है।''[1]

डा० परमेश्वरी लाल गुप्त के संस्करण में छन्दों की संख्या 452 दी गई है। किन्तु वास्तव में छन्द लगभग 390 हैं। वैज्ञानिक सम्पादन पद्धति का उपयोग न कर सकने के कारण उनके संस्करण में कतिपय प्रसंगों की पुनरावृत्ति हो गई है और कतिपय प्रक्षिप्त अंशों का भी समावेश अनेक स्थलों पर सहज ही हो गया है।

मई 1967 ई० में डा० माता प्रसाद गुप्त का एक नवीन संस्करण प्रकाशित हुआ है जो वैज्ञानिक संपादन-प्रणाली पर आधारित है। डा० माता प्रसाद गुप्त और डा० परमेश्वरी लाल गुप्त दोनों विद्वानों ने काशी कला भवन, मैनचेस्टर की रीलैंडस लाइब्रेरी, मनेरशरीफ, शिमला, मैसाचुसेट्स (अमरीका) आदि की प्रतियों का उपयोग किया है। बीकानेर की प्रति डा० परमेश्वरी लाल गुप्त को प्राप्त नहीं हो सकी थी। डा० माता प्रसाद गुप्त को यह प्रति प्राप्त हो गई थी। अतः लगभग 40 ऐसे नवीन छन्दों का उद्धार हो सका है जो डा० परमेश्वरी लाल गुप्त के संस्करण में नहीं है। इस प्रकार डा० माता प्रसाद गुप्त द्वारा वैज्ञानिक सम्पादन प्रणाली से सम्पादित और सामान्य ढंग से सम्पादित किए हुए डा० परमेश्वरी लाल गुप्त के पाठों में असाधारण अन्तर हो गया है।

<u>मौलाना दाऊद का महत्व एवं देन</u> :- अवधी भाषा में सूफी प्रेमाख्यान परम्परा के

1- चन्दायन - - —— --- डा० परमेश्वरी लाल गुप्त भूमिका, पृ० 13

सर्वप्रथम ज्ञात कवि मौलाना दाऊद हैं । प्रायः यह देखा गया है कि जो जिस क्षेत्र का वासी है उस क्षेत्री भाषा में अपने संदेश प्रसारित करना उपयुक्त समझता है । सूफी कवि भी जिस क्षेत्र में रहे हैं, वहाँ की भाषा में काव्य लिखते रहे हैं । पंजाब के सूफी कवियों ने पंजाबी में 'सस्सि पुन्नूँ', हीर रांझा' आदि की कथाओं को प्रेमाख्यान के माध्यम से पंजाबी में लिखा ।[1] इस प्रकार दौलत काजी, अलाउल आदि कवियों ने जो बंगाल के रहने वाले थे, बंगाली में लिखा ।[2] उसी प्रकार इलमऊ के रहने वाले मौलाना दाऊद ने लोक भाषा अवधी में , जनता को अपना संदेश प्रसारित किया। जिस प्रकार अमीर खुसरो की मसनवियों का प्रभाव हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यानों पर प्रत्यक्ष नहीं तो परोक्ष रूप से अवश्य पड़ा । बिल्कुल उसी प्रकार मौलाना दाऊद द्वारा कृत 'चंदायन ' ने हिन्दी शैली का प्रभाव परवर्ती अवधी भाषा में अनेक प्रेमाख्यानकों के लिखे जाने का प्रेरणास्रोत बना । मौलाना दाऊद के समर्थन में श्री परशुराम चतुर्वेदी की ये पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं :—

''मुल्ला दाऊद के समकालीन अमीर खुसरो ने कई मसनवियाँ लिखी थे । बहुत सम्भव है, मुल्ला दाऊद ने उसी पद्धति पर अपनी काव्य रचना की हो ।''[3]

कहने का तात्पर्य यह है कि मौलाना दाऊद ने अपने प्रेमाख्यान में जनसाधारण के प्रचलित लोक कथाओं को लोकभाषा के माध्यम से कहकर, एक नवीन शैली प्रारम्भ की जो हिन्दी साहित्य को इनकी मौलिक देन है । समय की गति विधि के प्रति उनकी यह जागरूकता उनके ग्रन्थ को साम्प्रदायिकता से ऊपर उठा देती है । शुद्ध हृदय से सदाचार सम्बन्धी नियमों का पालन करते हुए प्रेमस्वरूप जगत के कण-कण में व्याप्त ब्रह्म की उपासना ही इनका ध्येय था जिनमें प्रेम के आध्यात्मिक स्वरूप के दर्शन हैं ।

1- पंजाबी सूफी पोयट्स — लाजवंती राम कृष्ण ।
2- इस्लामी बांगला साहित्य — श्री सुकुमार सेन ।
3- हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास, चतुर्थ भाग, सं० पं० परशुराम चतुर्वेदी पृ० 30

शेख अब्दुल कुद्दूस गंगोही का परिचय

शेख नसीरुद्दीन चिराग़देहलवी के पश्चात् दिल्ली में कोई ऐसा महान चिश्ती सूफ़ी शेष नहीं रहा जो चिश्ती सम्प्रदाय को केन्द्रित रूप से व्यवस्थित कर सकता। 1339 ई० में तैमूर के आक्रमण के उपरान्त दिल्ली का राजनैतिक वैभव भी समाप्त हो गया, तो बंगाल, दकन, मालवा, जौनपुर और गुजरात में स्वतंत्र राज्य स्थापित हो गए। इसी प्रकार जब चिश्तिया सम्प्रदाय का केन्द्रिय रूप छिन्न भिन्न हुआ तो चिश्तियों की प्रान्तीय खानकाहों (आश्रम) की भी समृद्धि हुई। इन आश्रम के सूफ़ियों को स्थानीय जनता एवं तत्कालिक स्थानीय समस्याओं से गहरी सहानुभूति थी। इनके नेतृत्व में स्थानीय भाषाओं को लोकप्रियता प्राप्त हुई और उनके प्रयोग से अधिक से अधिक लोग रुचि लेने लगे। शेख नसीरुद्दीन चिराग़देहलवी के मुख्य शिष्य सैयद मुहम्मद बिन सैयद यूसुफ़ हुसैनी, जो मुहम्मद हुसैनी 'गेसूदराज़' (लम्बे केशों वाले) अथवा 'ख़्वाजा बन्दानवाज़ गेसूदराज़ (1320-1422 ई०) के नाम से विख्यात हैं, उच्चकोटि के विद्वान्‌ थे। फ़ारसी भाषा में इन्होंने ऐसे अनेक ग्रन्थों की रचना की जो 14वीं शताब्दी के सूफ़ी आन्दोलन को समझने में विशेष उपयोगी सिद्ध होते हैं। 'मेराजुल आशिक़ीन' इन की एक ऐसी उल्लेख कृत है जो आकार की दृष्टि से छोटी होते हुए भी सूफ़ी सिद्धान्तों की स्पष्ट व्याख्या करने में समर्थ है। सैयद मुहम्मद अशरफ़ जहाँगीर सिमनानी ने भी इस दिशा में स्तुत्य प्रयास किए। शेख अब्दुल कुद्दूस गंगोही कृत रुक़्नामा इसी परम्परा का एक ग्रन्थ है जिसे शेख साहब के समन्वयात्मक दृष्टिकोण तथा मौलिक चिन्तन का परिणाम कहा जा सकता है।

जन्म समय एवं स्थान :— शेख अब्दुल कुद्दूस का जन्म 1456 ई० में हुआ। इनके पिता का नाम शेख इस्माईल था। वे रुदौली के निवासी थे। शेख अब्दुल कुद्दूस बाल्यावस्था से ही ईश्वर के ध्यान में मग्न रहते थे। अल्प आयु में ही उनके मन में यह इच्छा प्रबल थी कि किसी निर्जन स्थान में निकल जाएँ और घोर तपस्या करें।

गुरु :— शेख अब्दुल कुद्दूस गंगोही चिश्ती सम्प्रदाय के साबरिया शाखा में मुरीद (शिष्य) थे इस शाखा की स्थापना कलियर के शेख अलाउद्दीन अली बिन अहमद साबिर (मृत्यु 1291 ई०) ने की थी। मुहम्मद हाशिम 'बदख़्शानी' 'कुल्लतुल मकामात' में चिश्ती सम्प्रदाय का एक खिलाफ़तनामा (उत्तराधिकार नियुक्त करने के समय दिया जाने वाला प्रमाण पत्र) दिया है जो मुजद्दिद अल्फ़े सानी शेख अहमद सरहिन्दी के

के पिता शेख अहमद फारूकी काकुली (मृत्यु 1599ई०) को चिश्ती सम्प्रदाय में दीक्षा पाने के पश्चात् प्राप्त हुआ था इससे शेखअब्दुल कुद्दूस गंगोही के चिश्ती सम्प्रदाय में दीक्षा पाने का क्रम इस प्रकार स्थापित होता है ——

ख्वाजा मोईनउद्दीन चिश्ती
ख्वाजा कुतुबुद्दीन बख्तियार
शेख फरीदउद्दीन मसऊद अजोधनी
शेख अलाउद्दीन अलीअहमद साबिर
शेख शम्सउद्दीन तुर्क पानी पती
शेख अहमद अब्दुलहक
शेख मुहम्मद आरिफ
शेख अब्दुल कुद्दूस ।[1]

उपर्युक्त खिलाफतनामें में शेख मुहम्मद आरिफ से शेख अब्दुल कुद्दूस को दीक्षित दिखाया गया है किन्तु शुद्ध क्रम इस प्रकार बताया जाता है ——

शेख अहम्मद अब्दुल हक ।
शेख आरिफ (पुत्र)
शेख मुहम्मद (पुत्र)
शेख अब्दुल कुद्दूस ।[2]

आध्यात्मिक रूप से शेख अब्दुल कुद्दूस गंगोही ने अपने गुरु (शेख मुहम्मद) के दादा शेख अहमद अब्दुलहक से ही प्रेरणा प्राप्त करते रहते थे । अपने गुरु की समाधि निवास में झाड़ूलगाने और लकड़ियां लाने पर गर्व किया करते थे ।[3]

शेख अब्दुल कुद्दूसी की इच्छा विवाह करने की न थी किन्तु कुछ परिस्थितियों के कारण शेख आरिफ की पुत्री शेख मुहम्मद की बहन से विवाह किया । जब जल्वे[4] की रस्म के लिए उन्हें घर के भीतर ले गए तो गायिकाओं ने हिन्दी का यह गीत प्रारम्भ किया ——

घूंघट खोल धन्ना शह शेख आगोरी ।
इस घूंघट रे कारन शह हाथ मरोरी ।।

1- जब्दतुलमकामात — मुहम्मद हाशिम बरझानी, (1885ई०लखनऊ)पृ० 94
2- अखबारुल अखियार, पृ० 192, 221, लतायफे कुद्दूसी — शेखरुकुद्दीन पृ०29
3- लतायफे कुद्दूसी (देहली 1893-94 ई०) पृ० 10
4- यह प्रथा भारत के मुसलमानों में 14वीं शताब्दी के प्रारम्भ में भी पाईजाती थी अमीर खुसरो ने देवलरानी और खिज्री नामक काव्य में इस का सविस्तार उल्लेख किया है ।(देवलरानी और खिज्री ,अलीगढ़ (1917ई०)पृ०167, 168 तथा खिजली कालीन भारत-पृ०174)इस प्रथा के अनुसार वर वधु के घर में स्त्रियों के झुरमुट में प्रथम बार वधु को आँखों में देखता है । इस अवसर पर स्त्रियाँ खूब गाती बजाती हैं ।

शेख साहब की इस बात ने मुक्ति कर दिया । वे जिस तख्त पर बैठे थे उस गिर पड़े, नृत्य करने लगे और विवाह के वस्त्र फाड़ डाले । विवाह के उपरान्त भी फाका मस्ती और रात्रिदिन ईश्वर भक्ति में ही तल्लीन रहते थे ।

राजनैतिक परिस्थितियाँ :- सुलतान बहलोल लोधी (1451-1489ई0) ने उमर खाँ सरवानी की मियाँ निजाम शाहजादे के अधीन कर दिया था । मियाँ निजाम बाद में बादशाह हुआ और उसने सुलतान सिकन्दर (1489-1517ई0) को उपाधिधारण की । संयोगवश मियाँ निजाम और उमराखाँ की न बनी । उमराखाँ बहादुर शाह शाहजादा के पास जौनपुर पहुँचा । वहाँ भी उसका काम न बना । बड़े असमंजस में पड़ गया । कहीं भी सर छिपाने का स्थान न था, कहाँ जाय? मनमें आया कि दरवेशों की शरण जाँ । रुदौली कस्बे में पहुँचा । वहाँ के निवासी उससे भेंट करने पहुँचे । उसने पूछा कि यहाँ कोई पहुँचा हुआ दरवेश अथवा मजूब (दीवाना) भी है जिससे मैं भेंट कर सकूँ । लोगों ने कहा एक तो शेख अब्दुल कुद्दूस नाम युवक है जिन्हें ईश्वर प्रेम ने जला भुना डाला है वे बड़े कमाल वाले और ईश्वर में लीन रहने वाले व्यक्ति हैं और किसी ओर ध्यान नहीं देते । उमर खाँ ने निर्णय किया दरवेश से भेंट करूँ । जब उसको शेख अब्दुल कुद्दूस से भेंट हुई तो उसने आपके आध्यात्मिक गरिमा के सामने गिड़गिड़ा कर चरणों में गिर पड़ा । हजरत शेख ने कहा ''ईश्वर ने वादा की जिस प्रकार हमारे लिए स्थान है तेरे लिए भी हो जाएगा , चिन्ता मत कर ।'' उमर खाँ को पूर्ण विश्वास हो गया कि हमारा काम बन गया । --- मियाँ निजाम शाह ने उमर खाँ सरवानी के पास अपने दूत भेजे और खिलअत प्रेषित की । तदुपरान्त बहलोल का निधन हो गया । जिसके पश्चात राजनैतिक स्थिति और बिगड़ गई, रुदौली परगने की दशा अधिक दयनीय हो गई । शेख अब्दुल कुद्दूस दुखी होकर नधना नामक स्थान पर जहाँ सुलतान सिकन्दर का पड़ाव था, चले आए । शेख के सेवक ने उमराखाँ के पास पहुँचकर रुदौली की दशा का वर्णन किया । उमराखाँ ने सोचा शेख अब्दुल कुद्दूस ऐसी परिस्थिति में अपने पूर्वजों का वतन छोड़कर हमारी शाहाबाद नाम परगने में चले आए तो यह हमारी लिए बड़ी सौभाग्य की बात होगी । उमर खाँ के प्रयत्न से शेख अब्दुल कुद्दूस 1491 ई0 में आयु 34वर्ष की अवस्था में अम्बाला में स्थित शाहाबाद नगर में पहुँचे ।[1]

1- खजीनए कुद्दूसी, पृ0 30,31

शेख अब्दुल कुद्दूस ने सुलतान सिकन्दर को एक पत्र लिखा और बताया ''सुलतान का एक घड़ी का न्याय, दूसरों की 60 वर्ष की इबादत (तपस्या) से बढ़कर है । धर्म और राज्य का स्थायित्व सुलतान पर निर्भर है । यदि सुलतान न होते तो मानव प्राणी एक दूसरे को खा जाते । जिस प्रकार शरीर का स्थायित्व प्राण पर निर्भर है, उसी प्रकार संसार का जीवन सुलतान पर आलम्बित है । जिस प्रकार शरीर को प्राण से सुख मिलता है उसी प्रकार संसार को सुख सुलतान से मिलता है। जिस प्रकार मनुष्य के अंगों में सिर को मुख्य स्थान प्राप्त है उसी प्रकार संसार में आलिमों एवं धार्मिक व्यक्तियों को । आपके राज्य में आलिमों के वर्ग को समस्त राज्यों एवं युगों से बढ़कर सम्मान मिलना चाहिए ।''

--------- सुलतानों के सिर पर,' सुलतान भूमि पर ईश्वर की छाया है' का मुकुट रखा गया है ----- यदि वे निःसहाय जनों, पवित्र लोगों ,आलिमों और सूफियों के प्रति कृपा न दिखाएंगे तो संसार के कार्यों में विघ्न पड़ जाएगा । ----- लोक तथा परलोक का कल्याण दो बातों पर निर्भर है —(1) ईश्वर की सच्चाई और निष्ठापूर्वक सेवाकरने पर (2) अपनी पूर्ण शक्ति से लोक सेवा पर, विशेष रूप से मोमिनों (धर्म निष्ठ मुसलमानों)और पवित्र लोगों तथा आलिमों की सेवा पर ''।[1]

1523-24ई० में बाबर के लाहौर एवं दीपालपुर विजय कर लेने के कारण पंजाब और दिल्ली के आस पास के स्थानों की शान्ति भंग हो गई थी । गुरु ग्रन्थ साहब में बाबानानक ने उस उथल-पुथल की कटु आलोचना की है । 'लतायफे कुद्दूसी' में भी शेख अब्दुल कुद्दूस इस उथल-पुथल के कारण शाहाबाद से गंगोह (सहारनपुर) पुनः पहुँचने का उल्लेख इस प्रकार है ——— जिस बार हजरत मुहम्मद बाबर बादशाह और सुलतान इब्राहीम का पानीपत में युद्ध हुआ, समस्त स्थान नष्ट भ्रष्ट होगए । शांति का कोई कोना न रह गया, भागने का कोई स्थान न रहा । शेख कुतुबी (अब्दुल कुद्दूस) अपने समस्त अनुयायियों एवं साथियों को लेकर कत्ताना पहुंचे ---- ------जब अपनी सेना लेकर युद्ध हेतु बढ़ा और दोनों सेनाओं में युद्ध प्रारम्भ भी न हुआ था कि शेख कुतुबी (अब्दुल कुद्दूस) ने अपने बड़े भाई शेख हमीद से कहा— मुझे अपने घोड़े पर ऐसा पता चल रहा है कि सुलतान इब्राहीम की सेना की पराजय हो जाएगी । हमें भाग चलना चाहिए । एक पहर अथवा इससे अधिक दिन न चढ़ा था कि सुलतान इब्राहीम की पराजय के समाचार आने लगे । संशोध में 18 अप्रैल 1526ई०[2]

1- मकतूबाते कुद्दूसिया (देहली 1871ई०)पृ० 44-46
2- बाबरनामा के अनुसार शुक्रवार 8 रजब (20 अप्रैल 1526 ई०)मुगलकालीन भारत (अलीगढ़ म० वि०वि० लाइब्रेरी 1960ई०) पृ० 156

को सुलतान इब्राहीम को बाबर बादशाह ने पानीपत में पराजित कर दिया । इसी बीच मुगल सवार पहुँच गये। हजरत कुतुबी (अब्दुल कुद्दूस) से घोड़े और वस्त्र ले लिए गये बड़े भाई शेख हमीद और सैयद राजा नामक सेवकों को बन्दी बना लिया । हजरत कुतुबी (अब्दुल कुद्दूस) के सर पर जो काली कम्बली की पगड़ी थी, उसे उतारली और शेख हमीद के गले को उससे बाँधकर उन्हें घोड़े की काठी से बाँध लिया । हजरत कुतुबी (अब्दुल कुद्दूस) ने कहा, पीरों (गुरुओं) की पगड़ी तेरे गले में है इसी से छूटे मुक्ति प्राप्त होई । '' भविष्य वाणी के कारण शेख हमीद और सैयद राजा को पीरों के आशीर्वाद एवं पगड़ी की बरकत से मुक्ति हुई । यद्यपि हजरत कुतुबी में (अब्दुल कुद्दूस) में पैदल चलने की शक्ति न थी किन्तु ईश्वर की कृपा से रणभूमि से सुगमता पूर्वक दिल्ली पहुँच गए ''।[1]

शेख अब्दुल कुद्दूस दिल्ली से गंगोह पहुँचे । उनकी बाबर से भेंट भी हुई अथवा नहीं, विश्वस्त रूप से कहना कठिन है किन्तु बाबर की सूफी, सन्तों एवं यहाँ के योगियों से अत्यधिक रुचि थी उसने बाबा नानक से भेंट की थी और उनके उपदेश सुने थे । अनुमान है कि सी न किसी समय बाबर की शेख अब्दुल कुद्दूस से भेंट अवश्य हुई होगी और आपस में वार्तालाप द्वारा हृदय की सफाई दी गई होगी । शेख अब्दुल कुद्दूस ने बाबर को भी इस प्रकार पत्र लिखा —— आलिमों तथा निःसहाय लोगों को आदर सम्मान प्रदान करना चाहिए । उनके वजीफे - मआश (आलिमों, सूफियों इत्यादि को दी जाने वाली भूमि) से उश्र (पैदावारकी) लेने की आज्ञा न दें अपितु इसे बहुत बड़ा पाप समझें —— ---- --- इसलाम के बैतुलमाल (खजाने) से वेतन पायें और अपने अपने पेशों को करते रहें ।[2]

शाहजादा हुमायूँ को जो पत्र शेख अब्दुल कुद्दूस ने लिखा, उसमें केवल आलिमों और पवित्र लोगों को प्रोत्साहन देने की शिक्षा दी है ।[3]

शेख अब्दुल कुद्दूस ने चिश्ती परम्परा के नियमानुसार कभी राजनीति में भाग नहीं लिया था । सुलतानों को पत्र अपने पुत्रों एवं आलिमों के आग्रह पर लिखा होगा । पत्र लिखने की यह प्रथा शेख बाबा फरीद एवं शेख अलाउद्दीन सिमनानी के समय से पूर्ण रूप से प्रचलित हो चली थी । किसी ने बाबा फरीद से सुलतान बलबन की सिफारिशी पत्र लिखने का आग्रह किया । आपने लिखा - -''मैंने सर्वप्रथम

1- लतायफे कुद्दूसी , पृ0 63 - 64
2- मकतूबाते कुद्दूसिया , पृ0 335 - 337
3- ---- वही ----- पृ0 338

अपना मामला ईश्वर के समक्ष पेश किया, तदुपरान्त तेरे । यदि तू इसे कुछ प्रदान करेगा तो (यह समझ कि) देने वाला ईश्वर है और तू (इस प्रकार) ईश्वर के प्रति कृतज्ञता प्रकट करेगा । यदि तू इसे कुछ न देगा तो भी रोकने वाला ईश्वर है और तेरे लिए क्षमा है ।[1]

शेख अब्दुल अब्बास की साधना पद्धति :— शेख साहब के पिता शेख इस्माईल, दादा काजी सदी तथा भाई शेख अब्दुलसमद सभी अपने समय के श्रेष्ठ विद्वान थे । बाल्यावस्था में शिक्षा ग्रहण करते समय शेख साहब का दिन का समय पुस्तकों के अध्ययन में व्यतीत होता और रात भर 'जिक्र' (नामस्मरण) एवं तपस्या में तल्लीन रहते । जो पुस्तकें भी पढ़ी उन्हें विधिवत मननकरके आत्मसात कर लिया और उनके विषयों पर उन्हें पूर्ण अधिकार प्राप्त हो गया । जब शेख साहब शिक्षा से उन्मुख होकर आध्यात्मिक ज्ञान की ओर झुके, तब माता ने इस स्थिति पर विचार करते हुए विशेष चिन्ता प्रकट की, शेख साहब के पिता का पहले ही निधन हो चुका था । शेख साहब की माता अपने भाई काजी दानियाल के पास जो उस समय रहोली कस्बे के हाकिम थे पहुंची। और रो-रोकर शेख साहब की दशा एवं भविष्य के लिए निवेदन किया कि —"आपके भागिनेय ने शिक्षा त्याग दी है आप उसे कठोरता पूर्वक सन्मार्ग पर लाइए।" काजी दानियाल ने शेख साहब को बुलाकर कहा- —तू क्यों नहीं पढ़ता , मैं तुझे दण्ड दूंगा।" शेख साहब ने अरबी भाषा में उत्तर दिया, " दण्ड कल्याण का साधन है । आप विलम्ब किस कारण करते हैं ?" उसी समय कुछ गायिकाएं पहुंच गई, शेख साहब उनके गायन से रसोन्मत्त होकर नृत्य करने लगे । काजी साहब ने अपनी बहन को समझाया कि उसका पुत्र अब अन्य जगत में पहुंच चुका है । चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं, भविष्य में एक उच्चकोटि का विद्वान होगा । शेख साहब नीरव वन में चले जाते और योगाभ्यास (रियाजत) तथा तपस्या में मग्न हो जाते । सोते समय की नमाज के बाद वे 'नमाजे माकूस' पढ़ते थे । इस नमाज के सम्बन्ध में, मौलाना शाहवली उल्ला लिखते हैं कि "चिश्ती लोग'सलाते (नमाज) माकूस पढ़ते हैं किन्तु न तो हजरत मुहम्मद की हदीसों (प्रवचन) और न पिछले मौलाओं की शिक्षा में मैंने 'नमाजे माकूस' का उल्लेख देखा है । अतः हम इस विषय में कुछ नहीं लिखते । ईश्वर ही जानता है यह वैध है अथवा नहीं ।[2] इस प्रयोग की विधि इस प्रकार है — पांव में रस्सी बांधकर उलटा लटकने के पश्चात नमाज पढ़ने को, नमाजे माकूस कहते हैं । शेख साहब

1- शिवरत्न औलिया , पृ0 71
2- कौलुल जमील, कानपुर 1874-75ई0, पृ0 53 (मौलाना शाहवली उल्ला)

सोने की नमाज के बाद अपने आपको लटकवा लेते थे और प्रातः काल होते ही खुलवा लेते थे । 'समा' भी आपकी साधना का प्रमुख अंग था । उस समय आप ईश्वर के प्रेम में मस्त हो जाते थे । मध्यान्ह (जुहर) के बाद 'समा' विशेष रूप से प्रारम्भ हो जाता । गायक मल्लार राग गाते । शेख साहब की मौलाना बानी की यह 'जकरी' बड़ी प्रिय थी ——

बहु सुरजन (साजन) सेज हमारया ।
मैं सुख लग सेज सँवारिया ।।[1]

प्रेम(इश्क) की मस्ती में 'बायजीद' और हल्लाज की भाँति कहने लगते, "मैं अकास की भूमिपर पटक सकता हूँ । कभी कहते कि ' हम अपना शिविर अर्श में ले जा रहे हैं ।" मस्ती की दशा में कुर्ते की पाशामें और पाशामें को कुर्ते के स्थान पर पहनने लगते । इस दशा का उल्लेख हिन्दवी में इस प्रकार पियाराने किया है—

काकरु सूइया का करु धागा ।
हराज (?) कहु मन अलहि लागा ।।[2]

मस्ती की दशा में जब अनिवार्य नमाज का समय आ जाता है वुजू करते और नमाज पढ़ते । कभी कभी रो-रोकर कहते कि अल्लाह के वलियों (संतों-सूफियों) को अपने एवं अन्य लोगों के भविष्य ज्ञान होता है किन्तु इस कारण यह बात संदिग्ध होती है, उन्हें परलोक का भय बना रहता है । तदुपरान्त दोहे के निम्नांकित चरण को पढ़ने लगते ——

अर्थो सबेरा सुहृद मंद, यौन बिनासु कर्यो ।

शिक्षा-दीक्षा विधि :— शेख साहब के गुरु शेख मुहम्मद लगभग आपकी अवस्था के बराबर थे । आपकी शिक्षा-दीक्षा विधि लगभग वही थी जो अन्य प्रसिद्ध चिश्ती ज्ञान-कर्ता (आपकों) में प्रचलित थी शेख अब्दुल कुद्दूस को जब 'जिक्रे जहर' एवं समा से जो समय बचता उस में अपनी गोष्ठियों में प्रश्नोत्तर द्वारा तसव्वुफ की शिक्षा प्रदान करते थे कभी कभी नए चेले, अतिथि एवं आगन्तुक भी इन गोष्ठियों में सम्मिलित हो जाते थे । दीक्षा प्राप्त करने की अवधि निश्चित न थी, शिष्य की योग्यता के आधार पर गुरु दीक्षा देता था कुछ शिष्यों को कई कई वर्ष तक प्रतीक्षा करनी पड़ती थी और कुछ अल्प समय में ही दीक्षा प्राप्त कर लेते थे । नमाज, रोजा एवं शरीअत के आदेशों का पालन अनिवार्य था । अपने सिद्धान्तों का निरूपण वे अन्य प्रतिष्ठित सूफियों की भाँति कुरआन के वाक्यों, हदीस तथा पूर्ववर्ती सूफियों की कहानियों द्वारा किया करते थे।

1- लतायफे कुद्दूसी , पृ० 62
2- [illegible]

सूफी ग्रन्थों पर भी टीका टिप्पणी होती थी । 'अवारिफुल मआरिफ' में जिन सिद्धान्तों का निरूपण किया गया है उन पर विशेष रूप से वाद-विवाद होता था । 'फुतूहुल गैब' और 'फतूहाते मक्किया' की भी चर्चा होती थी । एराकी के सम्बन्ध शेख सादक की अधिक प्रिय थे । वे उसका भी उल्लेख करते रहते, अल्लार और रूमी के तौर मसनवी (आसन) में गर्मी पैदा कर देते थे । मसनद बक की कविताएं लोगों में दैवी प्रेम उत्तेजित कर देती थीं । कभी कभी सूफ 'सादी' के शेरों का पाठ करके सूफी सिद्धान्तों पर प्रकाश डाला जाता था । मुल्लादाउद की अन्दायन का विशेष रूप से सम्मान होता था । अन्य कृतियों कविन्दी दोहे भी तसव्वुफ की मान्यताओं की पुष्टि हेतु पढ़े जाते थे । नाथ-योगियों के सबद, दोहे इत्यादि भी उदाहरण स्वरूप पढ़े जाते थे । इसके अतिरिक्त शेख अब्दुल कुद्दूस अपने शिष्यों को गोष्ठियों के विवरण लिखने का भी प्रशिक्षण देते रहते थे । जो शिष्य आप के पास से कहीं दूर चले जाते थे उनके लिए तसव्वुफ की पुस्तकों का अध्ययन अनिवार्य था ।[1]

कुछ शिष्यों को अलग से शिक्षा भी देते रहते थे। अपने एक शिष्य हुसैनशाह को तसव्वुफ की शिक्षा के प्रसंग में अरबी, अथवा अनुवाद 'अमूल कुल'(सौहल ख्याल) पढ़ाया था ।[2] यह अनुवाद शेख मुहम्मद गौस के 'बहरुल ख्याल' नामक अनुवाद से भिन्न 13वीं या 14वीं सदी के अनुवादों में कोई एक था । सम्भवतः अन्य प्रतिष्ठित शिष्यों को भी यह पुस्तक पढ़ाई जाती थी ।

शेख अब्दुल कुद्दूस की रचनाएं :- तसव्वुफ कुद्दूसी के अध्ययन से पता चलता है कि शेख साहब की पुस्तकों की रचना में विशेष रुचि थी । बाल्यावस्था में ही जिस समय आप 'चमी सफ' (प्रत्यय शास्त्र) पढ़ा करते थे, आपने 'बहरुल इनसेशाब' नामक पुस्तक लिखी जिसमें प्रश्नोत्तर रूप में प्रत्यय शास्त्र (इल्मेसर्फ) के सिद्धान्तों का निरूपण किया उनके गुरु जनों ने इस पुस्तक की बड़ी प्रशंसा की । अपने गुरुजनों के भाषण को जो अन्य पुस्तकों पर हुआ करते थे, अपने पुस्तक के रूप में संपादित किया, किन्तु यह रचनाएं रूहेली की राजनैतिक उथलपुथल के समय नष्ट हो गईं । रूहेली में ही आपने 'अन्दायन' के अन्द-अन्द्र फारसी रूपान्तर का महत्व पूर्ण कार्य प्रारम्भ किया जिसे सुलतान बहलोल और सुलतान हुसैन शर्की के युद्ध के समय (1483-84ई0)तक बहुत कुछ लिख भी लिया था किन्तु यह महत्वपूर्ण कार्य भी उस क्रान्ति की भेंट हो गया ।[3]

1- मकतूबाते कुद्दूसिया, पत्र 119 पृ0 112
2- ---- वही --- पत्र 168 पृ0 95
3- तसव्वुफ कुद्दूसी, पृ0 100

इसके अतिरिक्त 'तौहीदे वुजूदी' के सम्बन्ध में आप अन्य छोटी पुस्तकों की रचना करते रहते थे किन्तु उनमें अधिकांश अब अप्राप्य हैं । जो पुस्तकें शेख साहब की उपलब्ध हैं, वे इस प्रकार हैं :——

(1) रहनामा ।

(2) अनवारुल उहनफी अस्रारुल मकनून ।

(3) नूरुल हुदा ।

(4) दुर्रतुल ऐन ।

(5) मकतूबातें कुद्दूसिया ।

<u>रहनामा की हिन्दी कविता</u> :—— उपरोक्त सभी ग्रन्थों की रचना फारसी में हुई है । परन्तु रहनामा में हिन्दी रचनाओं का समय 14वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से लेकर 16वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक निश्चित किया जा सकता है । भाषा के अध्ययन की दृष्टि से यह समय इतिहास का महत्वपूर्ण समय है । बाबा कबीर (1398-1474ई0) तथा बाबा नानक (1469-1539ई0) जैसे विचारक इस युग में विशेष महत्व रखते हैं । रहनामें में शेख अब्दुल कुद्दूस ने अपनी, अपने गुरुजनों की तथा अपने मित्रों की हिन्दी रचनाएं करके एक प्रकार से हिन्दी के सूफी काव्य की टूटी हुई कड़ियों को जोड़ दिया है ।

हिन्दी में सूफी काव्य का मूल्यांकन सामान्यतः प्रेमाख्यानक काव्यों के प्रकाश में ही हुआ है । प्रेमाख्यानकों के अतिरिक्त स्फुट रूप से सूफी कवियों की जो रचनाएं उपलब्ध हैं उन्हें या तो उपेक्षा की दृष्टि से देखा गया है या संत काव्य में सम्मिलित कर दिया गया है । डा0 राम कुमार वर्मा ने अवश्य ही कबीर के रहस्यवाद पर विचार करते हुए उनके काव्य में अद्वैतवाद और सूफीमत की 'गंगा-जमुना' साथ साथ बहती हुए देखी और यह निर्णय दिया कि — ''मुसलमानी संस्कारों के कारण उनके विचारों में सूफीमत का तत्व मिलता है । ''[1] रहनामा में हिन्दी रचनाएं परम्परागत 'हिन्दवी' भाषा के जो सूफियों की चिश्ती शाखा में पुष्पित एवं पल्लवित होती हुई शेख अब्दुल कुद्दूस गंगोही तक पहुंची हैं । यह एक प्रयास निर्मित भाषा न होकर सहज विकसित भाषा है । इसे न तो 'संधा भाषा' कहा जा सकता है और न 'सधुक्कड़ी', हां , सुविधा की दृष्टि से इसे 'पुरानी हिन्दी' का नाम दिया जा सकता है । रहनामा की हिन्दी कविता में तद्भव की अपेक्षा तत्सम तथा अर्द्ध तत्सम शब्दों को ग्रहण करने की प्रवृत्ति

अधिक मिलती है । साथ ही श्लोक शीर्षक के अन्तर्गत ऐसी कविताएं भी लिखी गई हैं जिनमें प्रयुक्त शब्दों की ध्वनि संस्कृत के अनुरूप है किन्तु उनकी भाषा संस्कृत नहीं है। अन्यथा रत्ननामा की हिन्दी कविता में अरबी, फारसी शब्दों का अभाव सा है । चूंकि सूफी सन्त कवि व्याकरण के आचार्य न थे, उनके काव्य का प्रयोजन कुछ और ही था ।

रत्न नामा का महत्व एवं मूल्यांकन :— रत्न नामा शेख अब्दुल कुद्दूस गंगोही की एक ऐसी कृति है जो भारतीय तथा इस्लामी तत्व चिन्तन की विभिन्न धाराओं के प्रभाव को आत्मसात करती हुई उन्हें 'वहदतुल वुजूद' (एकत्ववाद) के सागर में समाहित कर देती है । इस ग्रन्थ के मूल में जिस समस्या का प्रणायन किया गया है वह एक सार्वभौमिक समस्या है । शेख साहब रत्नामा की प्रारम्भिक पंक्तियों में लिखते हैं ———

''इस रचना का उद्देश्य यह है कि ईश्वर का प्रत्येक जिज्ञासु इसे देखे और इसके अध्ययन से हृदय को शांति एवं विश्राम प्रदान कर और इस ज्ञान को प्राप्त करके हकीकम(परमसत्य) की ओर अग्रसर हो और यह जाने कि जगत् की उत्पत्ति तथा मानव की रचना का मूल उद्देश्य क्या है । यह आलम (संसार) किस कारण से 'आलमे हकीकत' (वास्तविक जगत्) से अस्तित्व में आया और इस के प्रकट किए जाने का क्या कारण था ?"[1]

वास्तव में यह सृष्टि की जिज्ञासा मनकी प्रधान समस्या है । अलपूर्ण उपनिषद में इसी समस्या पर विचार करने का उपदेश दिया गया है ———

'(अर्थात मैं कौन हूं, ? यह जगत कैसे बना ? यह क्या है ? जन्म मरण कैसे आए ? अपने अन्दर इस बात की जिज्ञासा करो, इससे तुम्हें महत्वपूर्ण फल की प्राप्ति होगी)"[2]

शेख साहब की दृष्टि में यह सृष्टि, ब्रह्म की इच्छा है और इसके प्रकट किए जाने का मूल कारण 'इश्क' (प्रेम) है । सृष्टि रचना से पूर्व वह ब्रह्म एक छुपी हुई निधि स्वरूप था और यह निधि उसकी परमसत्ता में उसी प्रकार निहित थी। जिस प्रकार बीज में वृक्ष ।[3] श्रीमद्भगवद् गीता तथा वेदान्त शास्त्र भी प्रकृति और पुरुष से परे एक सर्व व्यापक तत्व को बराबर की सृष्टि का मूल मानते हैं ।[4] सिख गुरुओं ने भी परमात्मा के अस्तित्व से ही सारी सृष्टि दृश्य रूप में प्रकट हुई मानी है।[5]

शेख साहब की दृष्टि में इस जगत की स्थिति पानी के बुलबुले से भिन्न नहीं है । यह बुलबुला जल से उत्पन्न होता है और जल ही में विलीन हो जाता है । इसी प्रकार यह संसार अपने मूल तत्व से पृथक होकर पुनः उसी में विलीन हो जाता है—

1- अलसानी, पृ० 7
2- अन्न पूर्ण उपनिषद, 1.40
3- अलसानी , पृ० 7
4- बालगंगाधर तिलक, गीता रहस्य अथवा कर्मयोग शास्त्र(अनुमाधन राव प्रेस बम्बई 1956ई०) पृ० 200

जलतें उपजा बुलबुला जलहीं मर्द बिलाय ।
तैसा यह संसार सब मूलहिं जाय समाय ।।[1]

गुरुग्रन्थ साहब में स्थान स्थान पर संसार के इस रूप की चर्चा हुई है ———

जैसे जल से बुदबुदा उपजै बिनसै नीत ।
जगु रचना तैसी रची कहु नानक मीत ।।[2]

इस निश्चल ब्रह्म से लौलगा लेने से जीव स्वयं भी निश्चल अर्थात नित्य स्वरूप हो जाता है । उसके हृदय से समस्त ईश्वरेतर भाव विलुप्त हो जाते हैं और वह जीवन सागर तक पहुँच कर परम अमृत का पालन करता है । इस प्रकार से उसे अमरत्व की प्राप्ति हो जाती है ।[3] उन्माद की अवस्था में भी यदि किसी ने प्रेम के रहस्य को व्यक्त कर दिया तो सूफी साधना के मार्ग में इसका पुरस्कार केवल सूली है।[4] ब्रह्म की यह अनुभूति 'तू और मैं' के व्यापार से अतीत है । कदाचित इसी लिए सन्त कवि सुन्दरदास ने इस अवस्था में साधनात्मक 'सौहर्द' को भी अहंकार का रूप माना है और मौन रहने का उपदेश दिया है ,———

सोहं सोहं कहै जबे लग तब लग दूजा कहिये ।
सुन्दर एक न दोई तहाँ कहु ज्यों का त्यों ह्वै रहिये ।।[5]

शेख साहब ने ठीक इसी प्रकार 'अनलहक' कहने से रोका है, और इस प्रसंग में फारसी का यह दोहा उद्धृत किया है :———

मस्त शवी गरचे तू हैब अनलहक न गो ।
सिर्रे खुदावन्द रा कमिश्री सरार बाश ।।[6]

आशय यह है कि "यदि तू प्रेम में मस्त हो जाता है तब भी 'अनलहक' मत कह ईश्वर के रहस्य को छुपाकर रख। प्रत्येक व्यक्ति इस रहस्य को छुपाकर नहीं रख सकता इसलिए यह रहस्य परमात्मा उस पर प्रकट करता है जो उसका सच्चा सेवक भक्त होता है "

इस प्रकार हम देखते हैं कि अपने समय के चिश्ती शाखा के महान हिन्दी सूफी कवि ने रहस्यनामा को रचकर अपने को अमर कर दिया। 27 नवम्बर 1537 ई० को शेख अब्दुल कुद्दूस गंगोही का निधन हो गया । उनके कई पुत्र थे और उनके शिष्यों की संख्या भी बहुत अधिक थी किन्तु शेख साहब की गद्दी उनके पुत्र शेख रुकनुद्दीन ने ही ली । शेख रुकनुद्दीन ने 'लतायफ कुद्दूसी' की रचना सितम्बर 1534ई में प्रारम्भ कर दी थी किन्तु अन्तिम भाग की रचना अपने पिता की मृत्यु के उपरान्त की ।

1- अलखबानी, पृ० 39
2- श्री गुरु ग्रन्थ साहब, सलोक, महला 9, पृ० 1363
3- अलखबानी, पृ० 55,56
4- --- वही --- पृ० 104
5- सुन्दर ग्रन्थावली - पद संख्या 102
6- रहस्यनामा (अ) पृ० 47 अ

'इलमनामा' की टीका आपने ही तैयार की । उस टीका में शेख अब्दुल कुद्दूस के विचारों का सामंजस्य सहीजत से किया गया है । शेख रुकनुद्दीन का निधन 1575-[illegible]ई0 में हुआ । शेख अब्दुल कुद्दूस के दूसरे उत्तराधिकारी (खलीफा) शेख जला थानेश्वरी भी बड़े प्रतिष्ठित सूफी हुए हैं । उन्होंने तसव्वुफ के विषय पर कई ग्रन्थों की रचना की । आप का निधन 72 वर्ष की अवस्था में 1581-82 ई0 में हुआ ।

कवि जायसी का परिचय

जिसी परम्परा के हिन्दी सूफी कवियों में मलिक मुहम्मद जायसी का स्थान बड़े सम्मान के साथ लिया जाता है। इनकी जन्मतिथि के सम्बन्ध में अभी कुछ निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता किन्तु यह माना जाता है कि उन का जन्म 900 हिजरी (सन् 1495 ई0) में हुआ था जिसका वर्णन जायसी ने अपने काव्य आखिरी कलाम में किया है

भा अवतार मोर नौ सदी ।

इन के बाल अवस्था के समय बड़ा भूचाल आया जिसका वर्णन जायसी ने अतिरंजित शब्दों में किया है

आवत उचत चार विधि ठाना । भा भूकम्प जगत अकुलाना ।
धरती दीन्ह चक्र विधि भाई । फिरै अकास रहंट के नाई ।।
गिरिपहाड़ मे दिनि सब हाला । जस बाला चलनी भर चाला ।।
मिरित लोक ज्यों रचा हिंडोला । सरग पताल पवन घट डोला।।
गिरि पहाड़ परबत हिल गए । सात समुन्द जो चम्पित गए ।। [1]

किन्तु तत्कालीन अथवा पीछे के ऐतिहासिक ग्रन्थों में इस भूकम्प का कोई वर्णन नहीं मिलता । सन् 911 ई0(1505ई0)वि) एक भंयकर भूकम्प आगरे में आया था ।[2] जिसकी बालक जायसी ने अनुभव किया होगा और उस अनुभव को जन्म समय के सुने हुए साधारण भूकम्प से सर्वथा कर दिया होगा ।

जायसी का जन्म रायबरेली प्रान्त के अन्तर्गत जायस नगर के कंचाने मुहल्ले में हुआ था जिस को और उन्होंने आखिरी कलाम में संकेत किया है

जायस नगर मोर स्थानू ।

ब्राह्मण कुलु तुर्क तुरुकु :- 'मलिक' अरबी भाषा का शब्द है जिस का अर्थ स्वामी, राजा सरदार आदि होते है। इस से प्रकट होता है कि इनके पूर्वज अरब थे। इनके पिता का नाम' शेख मुमरेज' था और इनकी ननिहाल मानिक पुर मे थी । शेख अलवदाद इनके नाना थे ।[3] कहा जाता है कि बालक जायसी पर शीतला का असाधारण प्रकोप हुआ जीवन

1- आखिरी कलाम, पृ0 340
2- 'ए शार्ट हिस्टरी आफ मुस्लिम रूल इन इंडिया' पृ0 232 - डा0ईश्वरी प्रसाद

को आज्ञा जाती रही । मातृ-हृदय विह्वल हो गया और सच्चे हृदय से शाहमदार नामक महान सूफी की समाधि पर मनौती की।[1] माता की प्रार्थना स्वीकृत हुई बालक जायसी बच गए, परन्तु एक आँख जाती रही और उसी ओर के कान से भी बहरे हो गए ।

एक नयन कवि 'मुहम्मद' गुनी ।

तथा

मुहम्मद आँख दिसिटजा, एक सरवन एक अंधि ।।[2]

सैयद मुस्तफा साहब के अनुसार जायसी लूले और कुबड़े भी थे।[3] परन्तु इसका कोई प्रमाण प्राप्य नहीं है। थोड़े दिनों पश्चात् उनकी माता का देहावसान हो गया जिस का स्वर्गवास पहले ही हो चुका था । इस प्रकार मलिक मुहम्मद बाल्यावस्था में ही अनाथ हो गए थे ।

मित्र एवं सन्तान:- जायसी ने अपने परिचित व्यक्तियों में केवल चार मित्रों - मलिक यूसुफ, सलार कादिम, सलोने मियाँ तथा शेख मुहीउद्दीन का स्मरण किया है तथा उन चारों में विशेष गुणों की ओर भी संकेत किया है।[4] विद्वानों का मत है कि जायसी स्वर्गीय शेख थे इस लिए सन्तान हीन थे ।

गुरुपरम्परा :- जायसी की गुरु परम्परा चिश्ती शाखा के महान सूफी शेख निजाम उद्दीन औलिया से संबंधित सैयद अशरफ जहाँगीर थे, इसी परम्परा में और आगे चलकर सैयद बाबा धाजी पिर शाह मुबारक बोहरी, इन के शिष्य शेख कमाल थे जो जायसी के गुरु थे । सैयद अशरफ जहाँगीर को जायसी ने संसार का स्वामी, चिश्ती और चाँद जैसा निष्कलंक बताया है:-

जहाँगीर और चिश्ती, निहकलंक जस चाँद ।
और मखदूम जगतक, सी उन्हके घर बाँद ।।[5]

अर्थात् "वे जगत के मखदूम हैं मैं उन का बन्दा '' हूँ

अखरी कलाम और 'चित्र रेखा' में भी उन्होंने अशरफ जहाँगीर को अपना गुरु स्वीकार किया है।[6] जायसी को

1- ओरिजिन ऑफ रिलीजियस कल्टस (डा० शशिभूषण दास गुप्ता) पृ० 192
2- पद्मावत पृ० 22
3- सैयद कल्ब मुस्तफा मलिक मुहम्मद जायसी, पृ० 22
4- पद्मावत स्तुति खण्ड, पृ० 8
5- --- वही --- पृ० 7
6- पद्मावत, डा० माता प्रसाद गुप्त, छंद 18, 19 अखरावट छंद 26 आखिरी कलाम, छंद 9 पृ० 73

गुरु परम्परा पद्मावत द्वारा निम्न प्रकार से है:-

शेख निजाम उद्दीन औलिया

शेख अलाउद्दीन

शेख आरिफ जर्रागीर

शेख काजी

शाह मुबारक बोदले

मलिक मुहम्मद जायसी

जायसी ने अपनी रचनाओं (पद मावत तथा अखरावट) में दी गुरु का वर्णन किया है प्रथम प्रकार से उपरोक्त है और दूसरी इस प्रकार है:-

शेख बहिर शाह

हजरत ख्वाजा खिज्र

शेख दानियाल

शेख मुहम्मद

शेख अलाउद्दीन

शेख बुरहान (कालपी के)

मलिक मुहम्मद जायसी ।

जिस आधार पर यह है कि प्रथम परम्परा में हजरत निजाम उद्दीन चिश्ती तथा शेख आरिफ जर्रागीर को ही स्मरण किया है। दूसरी में ख्वाजा खिज्र से लेकर बुरहान (कालपी) तक को अखरावट में स्वीकार किया है।

नायकियार सेख बुरहानू, नगर कालपी बहुत गुरु थानू ।

दानियाल गुरु पंथ सवाहू । हजरत ख्वाजा खिजिर तिन्हपाये ।।[2]

शेख मुहम्मद शेख दानियाल के शिष्य थे और शेख दानियाल के गुरु हजरत ख्वाजा खिज्र थे ।शेख अलाउद्दीन के शिष्य शेख बुरहान थाने थे उन्हीं शेख बुरहान(कालपी के) के शिष्य मलिक मुहम्मद जायसी थे । 'आखरी कलाम' में शेख बुरहान के सम्बन्ध में उल्लेख किया गया है कि कालपी में एकान्तवास करते थे और दूध तथा मिठाई के सहारे जीवित रहते थे, जल नहीं ग्रहण करते थे । उन्होंने अरबी का अध्ययन नहीं किया था

1- जायसी ग्रन्थावली ,पृ0664 ,डा0 माता प्रसाद गुप्त ।
2- पद्मावत , छंद 20

तथापि कुरआन की व्याख्या कर लेते थे । उनकी मृत्यु विजरी सन् 970 में हुई थी वह 100 वर्ष तक जीवित रहे। कालपी की छुटी में ही उनकी समाधि है ।[1] शेख बुरहान (कालपी) से शेख अलवदाद की भेंट हुई थी ।[2] इस का उल्लेख बदायूनी ने भी किया है। मलिक मुहम्मद जायसी ने अपनी प्रसिद्ध 'रचना' आखिरी कलाम' में एक मात्र सैयद अशरफ जहाँगीर को ही पीर (गुरु) स्वीकार किया है:-

मानिक एक पारखी उजियारा ,
सैयद असरफ पीर पियारा ।
जहाँगीर चिस्ती निरमरा ,
कुल जग माँ दीपक विधि धरा ।
औ निर्मल दरिया जल माहा ,
बूड़त पंथ पीर गहि बाहा ।
समुद माँझ जो डोलत फिरहीं ,
लेते नाँव सई दोई तरहीं ।
सिर पर हौं मुरीद सो पीरू ,
संवरत बिनु गुन लावै तीरू ।
कर गहि राम पंथ देखरावा ,
गा भलाह तेहि मारग लेऊ ।
जो अस पुरुषै मनचित लाए ,
पन्था पूँजे आस तुलाए ।[3]

एक ग्रन्थ में केवल एक गुरु का वर्णन न करना तथा अन्य दो ग्रन्थों में दो गुरुओं का वर्णन करना प्रमाणित करता है कि प्रारम्भ ।।'
एक गुरु से दीक्षा प्राप्त की , तत्पश्चात् दूसरे गुरु से भी लाभ उठाया ।

सारांश यह है कि जायसी के दीक्षा - गुरु अशरफी परम्परा के शाह मुबारक बोदले थे । जायसी ने अधिक समय इन्हीं गुरु की सेवा में व्यतीत किया था तथा इन्हीं की अनुकम्पा से जायसी की अपनी साधना में सफलता प्राप्त हुई साथ ही शेख बुरहान (कालपी) से भी जायसी की कुछ ग्रहण बातों का उपदेश मिला था । अतः वे भी विनय

1- आइने अकबरी , अनुवादक , ब्लाचमैन, भाग प्रथम संस्करण 1939 ई0पृ0608
2- जर्नल आफ हिस्टोरिकल रिसर्च, यूनिवर्सिटी आफ बिहार, खुदाबख्श पब्लिक लाइब्रेरी - दी मेहदी सैयद आफ इस्लाम एंड जायसी । भाग दो अंक ।अगस्त।9!
3- जायसी ग्रन्थावली , डा0 माता प्रसाद गुप्त , पृ0 690

शील जायसी की दृष्टि में गुरु के समक्ष सम्माननीय हुए । इस प्रकार जायसी के दो गुरु प्रसिद्ध हुए ।

<u>इतिहास एवं राजनीति</u> :- जायसी ने ऐतिहासिक ग्रन्थों का अध्ययन किया था या नहीं प्रमाणिक रूप से नहीं कहा जा सकता । परन्तु इसमें संदेह नहीं कि वे ऐतिहासिक घटनाओं और राजनीति के हलचलों से अनभिज्ञ न थे । उसमें उनकी रुचि थी । उनके सर्वश्रेष्ठ काव्य 'पदमावत' का उत्तरार्ध उनकी ऐतिहासिक जानकारी का सबल साक्षी है । जायसी ने राजा-बढ़ाई खंड में ——

बीलम राजा आय जनाई । लीन्ह देवगिरि और हलाई ।।

तथा

रनथंभउर जस अरि हुआ, चितउर परे सो आगि ।
पैरि बुझाए ना बुझै, एक दिवस जौ लागि ।।

अलाउद्दीन खिलजी की देवगिरि और रणथंभौर की विजयों का उल्लेख किया है जो 1294 ई तथा 1301 ई० में सम्पन्न हो चुकी थी । इन प्रसिद्ध घटनाओं के उल्लेख से लेखक की ऐतिहासिक योग्यता का प्रमाण मिलता है ।

<u>मलिक मुहम्मद जायसी की रचनाएं</u> :- मलिक मुहम्मद जायसी बहुत समय से 'पद्मावत' केलुयिता के नाम से प्रख्यात हैं जिसका उल्लेख अनेक स्थलों पर मिलता है । पं०रामचन्द्र शुक्ल जी ने जायसी की 'पद्मावत' के साथ साथ उनकी एक और कृति 'अखरावट' सम्मिलित कर दी । मुकालात-शिबली में पद्मावत के अतिरिक्त जायसी की दो और मसनवियों की चर्चा मिलती है ।[1] तथा नूरुलहसन साहब ने 'हिन्दुस्तानी ऐकडेमी में भी जायसी की 'पद्मावत' तथा अखरावट) के अतिरिक्त एक एक और ग्रन्थ का उल्लेख किया था ।[2] अन्ततः सैयद कल्ब मुस्तफा साहब के परिश्रम से और निजामतउल्ला साहब की कृपा से जायसी के तृतीय ग्रन्थ 'आखिरी-कलाम' प्राप्त हुई और जायसी ग्रन्थावली के नवीन संशोधित संस्करण में (सन् 1935ई०) में सम्मिलित होकर हिन्दी जगत के समक्ष आई । इस प्रकार मलिक साहब की तीन पुस्तकों से —— पद्मावत, अखरावट तथा आखिरी-कलाम, हिन्दी प्रेमी परिचित हैं । परन्तु जन-श्रुति के आधार पर जायसी की 14 ग्रन्थों बतलाई

1- मौलाना शिबली मुकालात-शिबली 'मलिक मु० जायसी' ने पद्मावत के सिवाय भाव में दो और मसनवियाँ लिखी हैं जो उनके खान्दान में अब भी मौजूद हैलेकिन उनके छपने की नौबत नहीं आई ।

2- नूरुलहसन - हिन्दी जबान और मुसलमानों का तबई मिलान' -हिन्दुस्तानी ऐकडेमी, अक्टूबर, सन् 1936 'पद्मावत के सिवाय दो किताबें अखरावट और एक का नाम नहीं मालूम भाषा जबान में लिखी हैं जिनके जेवर तबअ आराइश होने की नौबत नहीं आई ।'

जाती हैं । इनके नाम इस प्रकार हैं ——[1]

(1) पद्मावत (2) अखरावट (3) आखिरी-कलाम (4) सिंघरावत (5) चन्द्रावट (6) इतरावत (7) मटकावत (8) चित्रावट (9) कहरानामा (10) सुराहनामा (11) मकरनामा (12) पोस्ती नामा (13) मदरानामा (14) होली नामा ।

उपरोक्त में से केवल तीन काव्य ही सुलभ हैं । जो प्रकाशित भी हो चुके हैं हम जायसी भक्तों का ध्यान आकर्षित करना चाहते हैं कि वह इन काव्यों के अतिरिक्त अन्य काव्यों के उपलब्धि में सहायता करें । उनके छिपाने का कारण —" उन्माद की अवस्था में भी यदि किसी ने प्रेम के रहस्य को व्यक्त कर दिया तो सूफी साधना के मार्ग में इसका पुरस्कार केवल सूली है ।[2] सूफीमत गुरु प्रधान है गुरु-शिक्षा, मंत्र, उपदेश आदि को उनके अनुयायी बड़ी सावधानी से छिपाते हैं । उन्हें सदैव खटका बना रहता है कि कहीं कोई गुरु-वाक्य अनाधिकारी के हाथ न पड़ जाए । जायसी भी सूफी थे, अतः उनके अनुयायी उनकी पुस्तकों को 'औरों' से छिपाते हों । यदि जायसी-भक्तों के हृदय में यह भावना दूर हो जाए तो सम्भव है कि कुछ और प्रमाणिक पुस्तकें प्रकाश में आएँ ।

<u>रचना काल</u> :-- जायसी का काव्य 'अखरावट' 479 पंक्तियों का है, जिसमें 54 दोहे उतने ही सोरठे तथा 371 चौपाइयाँ (अर्द्धालियाँ) हैं । सर्व प्रथम एक दोहा तत्पश्चात एक सोरठा है जिसपर गिनती नहीं डाली गई है । इनके पश्चात सात अर्द्धालियाँ के अनन्तर फिर वही दोहे और सोरठे का क्रम है । जायसी ने इस काव्य का रचनाकाल नहीं दिया है न इसमें शाहे वक्त की प्रशंसा है क्योंकि यह मसनवी नहीं है । यह जायसी का सिद्धान्त-ग्रन्थ है । जनश्रुति के आधार अखरावट की रचना अमेठी के राजा के कहने पर हुई थी ।[3] परन्तु राजा का जायसी से परिचय 'तद्भव' के द्वारा हुआ था । इसके अतिरिक्त शैली की प्रौढ़ता एवं विशदता के समर्थन से तथा आध्यात्मिकता के विशेष झुकाव के कारण हम इस काव्य को 'पद्मावत' के पश्चात् सन् 1542 ई० की ही रचना मानते हैं ।

<u>आखिरी कलाम</u> —- जायसी की कृति 'आखिरी कलाम' में 420 चौपाइयाँ (अर्द्धालियाँ) एवं 60 दोहों पर आधारित ग्रन्थ है । इस काव्य की रचना मुगल राज्य के संस्थापक बाबर के समय की है ——

1- सैयद कल्ब मुस्तफा : मलिक मुहम्मद जायसी, पृ० 83 का फुटनोट
2- रहस्यनामा (अ) पृ० 47 ब

बाबर साह छत्रपति राजा । राजपाट उन कई विधि साजा ।।[1]

ऐतिहासिक साक्ष्य के आधार पर यह स्पष्ट है कि बाबर ने 1530 ई० से पूर्व घाघरा के प्रसिद्ध युद्ध में अफगानों को पराजित कर शान्ति प्राप्त की थी ।[2] यह सम्भव है कि जायसी बाबर के दरबार में भी सम्मिलित हुए हों क्यों कि उस समय तक मुगल राज्य जायस तक न फैला था ।[3] आखिरी कलाम की पंक्ति —

जायस नगर मोर अस्थानू ।

प्रकट करती है कि जायसी इस काव्य की रचना के समय जायस से भिन्न स्थान पर निवास कर रहे थे । जायसी ने बाबर की दान-वीरता की जी खोल कर प्रशंसा की है ।[4] इस कृति की रचना काल के सम्बन्ध में स्वयं जायसी ने कहा है —

नौ सै बरस छत्तीस जो भये । तब एहि कथा के आखर कहे ।।

इस तिथि के विरोध में अभी तक कहीं कोई निर्देश नहीं मिला है । अतः हम निश्चय पूर्वक कह सकते हैं कि आखिरी कलाम का रचना काल 936हि०(1530ई०)है।

पद्मावत :— जायसी ने 'पद्मावत' का रचना काल अपने ग्रन्थ में अत्यन्त विवादास्पद ढंग से इतिहास कहा । कथा आरम्भ-चैन कवि कहा ।।

परन्तु इस पंक्ति के पाठ के विषय में विद्वानों में मत भेद होते हुए भी श्री चन्द्रबली पाण्डेय का कथन प्रमाणिक है — 'उन्होंने पद्मावत में जिन रचनाओं का वर्णन किया है उनकी संगति प्रायः शेरशाह के समय में ही ठीक-ठीक बैठती है ।[5] काव्य का प्रत्येक अंश भी पुकार पुकार कर शेरशाह के समय की साक्ष्य दे रहा है जो तर्क की कसौटी पर खरा उतरता है । इस प्रकार 'पद्मावत' का रचनाकाल 947 हि०(1540 ई०) प्रमाणित होता है । 'पद्मावत' का उद्देश्य है उद्विग्नता रहित शान्ति ,परम सम्मिलन पद्मावत का सती होना । कवि ने इस घटना से संसार की असारता की ओर संकेत कर बड़ा शान्त वातावरण प्रस्तुत किया है —

राती पिउकी सेज गई , सरग भएउ रतनार ।।
जौ रे उवा सो अथवा, रहा न कोई संसार ।।[6]

किसी देश के साहित्य में महाकाव्यों का सृजन उस देश की तत्कालीन उन्नत

1- आखिरी-कलाम, 34।
2- 'दी मुगल एम्पायर' प्रीम बाबर टू औरंगजेब' पृ० एम० जायस, पृ०21।
3- इलाहाबाद का गजेटियर, भाग 36, 1903 ई० पृ० 134
4- देखिए आखिरी कलाम के 7वें तथा 8वें दोहे के बीच की चौपाइयाँ ।
5- पद्मावत की लिपि तथा रचना काल ना०प्र० पत्रिका भाग 13 सं० 1989 चन्द्रबली पाण्डेय, पृ० 495
6- पद्मावत — 300

संस्कृति, परिमार्जित लोक-कृति परिष्कृत काव्य तत्व की सम्पन्नता आदि परिचायक है । आदि काव्य 'पद्मावत' हिन्दी काव्य की परम्परा में सर्वप्रथम महाकाव्य है । 'पद्मावत' की रचना के लगभग 30 वर्ष पश्चात् गोस्वामी तुलसीदास जी ने लोकप्रसिद्ध 'रामचरितमानस' का निर्माण इसी आधार पर किया था । इस कथा के कतिपय स्थलों के समझने केलिए कुछ पारिभाषिक शब्दों, सूफियों की प्रेम पद्धति एवं तत्कालीन रूढ़ि का ज्ञान लेना नितान्त आवश्यक है ।

प्रेम पद्धति :- सूफियों की साधना प्रेम-मूलक है । यह प्रेम वास्तव में परम परम प्रियतम परमेश्वर के प्रति होता है, किन्तु उसका वर्णन केवल प्रतीक रूप में ही सम्भव है । इस आदर्श प्रेम का वर्णन किसी पार्थिव व्यक्ति के प्रति प्रेम वर्णन करके दिखाया जाता है । सूफियों का पार्थिव प्रियतम नारी रूप एवं किशोर रूप में होता है । हाफिज, रूमी, अरबी आदि सूफी रमणी पर मुग्ध थे, परन्तु कुछ सूफी किशोरों को ही अपना प्रियतम चुनते हैं । सूफी नारियों में राबिया बसरी का नाम अमर है जिसने ईश्वर को ही अपना प्रियतम माना था ।

जायसी की प्रेम पद्धति की विशेषता यह है कि उन्होंने अपने विवेचन में अपने व्यक्तित्व को अलग रखा है । इनकी कहीं से भी यह संकेत भी गन्ध नहीं मिलती कि जायसी किसी पार्थिव व्यक्ति के प्रेमी थे । उनका प्रेम केवल ईश्वर के प्रति था और उन्होंने सांसारिक प्रेम में भी उसकी झलक देखी थी । अतः जायसी का प्रियतम सीमित नहीं है । वह अनेक व्यक्तियों में और अनेक में विद्यमान है ।

सर्व प्रथम नागमती अपने प्रेम को रत्नसेन के प्रति प्रकट करती हुई उसी प्रेम के प्रति आभास देती है :-

मैं जानउँ तुम्ह मोहो मोहा, देखो ताकि तो हो सब पोहा।।
तुम्ह सँ रन काऊ न जीता, हारे घर रूप सेज,
पहिले आयु जो खोये , करे तुम्हार सो लाज[1]॥

हिरामन सुआ भी अपनी स्वामिनी को उसी रूप में देखता है :-

जो लहिं जियाँ रात दिन, सँवरी ओहि कर नाँव,
मुख राता, तनहीरियर, दुई जगत लोहि जाँव[2]॥

पद्मावत तो सर्वत्र ही उसी परम का प्रतीक है :-

जग कोर दीठि न आवै, उघाछोहिं नैन उघकाल,
जोगी जती सन्यासी , तप साधहिं तेहि आस[3]॥

1- पद्मावत - पृष्ठ 37
2- ,, ,, 38
3- ,, ,, 21

स्वयम पद्मावती के लिए राजा रत्न सेन भी उसी परम का प्रतीक है । उस के साथी, मित्र, किंवा गुरु-हीरामन में उसी को झलक पाकर उनकी विरह अग्नि कुछ मन्द अवश्य पड़ जाती है ——

पद्मावती उठि टेकै पाया, तुम्ह हुई देखौं पीतम छाया[1] ।।

इस तथ्य की पुष्टि इस बात से और हो जाती है कि प्रेम में सफल होने के लिए, ध्येय प्राप्ति के साधनों में अनुभावी सद्गुरु की संरक्षा की परमावश्यकता है । बिना गुरु प्रदर्शन के ध्येय लाभ सम्भव है । अतः पद्मावती सर को गुरु-रूप में स्वीकार करती हुई साधना-पथ में प्रदर्शन के लिए याचना करती है ——

तुम्ह सौ मोरह खेवक गुरु देवा, उतरौं पार तेहि विधि खेवा[2] ।।

जायसी के लिए अलाउद्दीन जैसा इन्द्रिय-लोलुप भी उसी परम शक्ति का प्रतीक है । राजा रत्नसेन अपने उच्च, अगम्य, अभेद्य कोटि में भी अलाउद्दीन (उस परम) की दृष्टि से न बच सका :—

जौ गढ़ साजै दस- कोटि उठावै कोट ,
बारुआइ जब चाढ़ै, छपै न कोऊ ओट[3] ।।

इस प्रकार जायसी ने कथा के बहाने सूफी प्रेम-पद्धति तथा उसके कतिपय सिद्धान्तों का ही दिग्दर्शन कराया है ।

सर्वोत्तम साधन :- जायसी प्रेम मार्ग को ध्येय प्राप्ति का सर्वोत्तम साधन मानते थे । उनका विचार था कि जिसव्यक्ति ने ऐसे सरल उपाय के द्वारा ध्येय प्राप्त न की उसका जन्म लेना नितान्त व्यर्थ है :-

जौ नहि सीस पन्थ पग लावा,
सौ पृथिमी मँह काहेक आवा[4] ।।

गुरु महत्व :- सूफियों में गुरु का महत्व अत्यधिक है, गुरु-कृपा से ही शिष्य के हृदय में प्रेमोदय होता है । सद्गुरु उसका पथ-प्रदर्शन करता रहता है । परन्तु प्रेम मार्ग में कष्ट उठाने पड़ते हैं । सुखिया इस मार्ग पर चल नहीं सकता । इस मार्ग पर वही चल सकता । इस मार्ग पर वही चल सकता सकता है जो अपना सर हथेली पर रख लें :-

प्रेम सुनत मत भूल बराजा, कठिन प्रेम, सिर देई तौ छाजा[5] ।।

1- पद्मावत पृष्ठ 109
2- पद्मावत पृष्ठ 236
3- पद्मावत पृष्ठ 3
4- पद्मावत पृष्ठ 40
5- पद्मावत पृष्ठ 7

जिस प्रियतम के दीदार के लिए ऐसे विकट मार्ग से जाना पड़ता है, इतने कष्ट सहने पड़ते हैं, अपने को मिटाना होता है, वह प्रियतम "आदि का एक करतारू है । परन्तु न उसका कोई रूप है, और न कोई वर्ण :-

अलख अरूप अवरन सो कर्ता [1]॥

प्रसिद्ध सूफी अलग जातों ने भी कहा है —"इस बात को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है कि जहाँ सौन्दर्य है वहाँ प्रेम स्वाभाविक हो जाता है । जहाँ सौन्दर्य अधिक होगा वहाँ प्रेम भी प्रखर होगा और ईश्वर पूर्ण सौन्दर्य है । अतः सच्चा प्रेम का अधिकारी नहीं है[2]॥

यद्यपि जायसी ईश्वर को प्रियतम रूप में देखने के पक्षपाती है, तथापि जो व्यक्ति उनको जिस रूप में देखने का प्रयत्न करता है, उसको वह वैसे ही दिखाई देता है :-

निर्मल दरपन भाँति विसेखा, जो जेहि रूप सो तैसेई देखा[3]॥

इस प्रकार जायसी ने अपने प्रकृत काव्य में सूफियों की अवस्थाओं का नाम न लेकर भी उनका दिग्दर्शन करा दिया है । मत-प्रतिपादन की दृष्टि से दर्शन-विवेचन नहीं किया । पद्मिनी के नख शिख-वर्णन में तो कवि ने उसी परम ज्योति के ही अनुपम सौन्दर्य, आकर्षण, व्यापकता आदि का आभास होता है ।

सूफी वास्तव में विरह में मतवाले प्रेमी है । उनकी प्रकृति के कण कण में उसी के वियोग में जलता दिखाई देता है । अतः गुरु पर पूर्ण विश्वास करके उसकी आज्ञा में रहकर समस्त मार्ग सरलता पूर्वक पूर्ण हो जाते हैं ।

जायसी का महत्व एवं साहित्यिक देन :- सूफी मुईनुद्दीन चिश्ती सूफी बाबा फरीद सूफी निजामउद्दीन औलिया एवं उनके कतिपय प्रसिद्ध शिष्यों का अपना व्यक्तिगत आकर्षण था । परन्तु उनके सिद्धान्त लोक भाषा की पूर्ति मलिक मुहम्मद जायसी ने की । वह अवध प्रान्त के अन्तर्गत जायस के रहने वाले थे । उन्होंने अपने स्थान की जन-साधारण की बोली में सूफी सिद्धान्तों को रच डाला । जनता के अतृप्त हृदय को सन्तोष प्राप्त हुआ । जायसी के जीवन काल ही में उनके काव्य लोक प्रिय हो गए । जिस व्यक्ति ने उनके चार छः पद्य सुने, उनका मुरीद(शिष्य) हो गया[4] । 'पद्मावत' की लोकप्रियता के अनेक प्रमाण तो इसके अनुवाद —— बंगला, पश्तो, फारसी, उर्दू, बड़ी बोली, हिन्दी, अंग्रेजी तथा फ्रेंच[2] में पाया जाता है । शायद ही किसी अन्य ग्रन्थ को

1- पद्मावत के एक दोहे पर रीझकर अमेठी के राजा ने जायसी को सत्कार पूर्वक अपने यहाँ बुलाना प्रसिद्ध ही है । (रामचन्द्र शुक्ल —जायसी ग्रन्थावली की भूमिका पृष्ठ-11
2- डा० कमल सेठ —-मलिक मुहम्मद जायसी पृष्ठ-25-26 ।
3- [illegible] पृष्ठ - 79

इतनी हस्तलिखित प्रतियाँ प्राप्त हैं । यद्यपि प्रेमाख्यान की परम्परा मौलाना दाऊद के द्वारा प्रारम्भ हुई थी, तथा इनका विकास 'पद्मावत' के साथ ही हुआ जायसी से प्रोत्साहन पाकर उनके परवर्ती उसमान के अतिरिक्त अनेक प्रेमाख्यान लिखे गए । इनकी सूफी अथवा प्रेम-मार्ग कवियों ने प्रेम का बड़ा सुन्दर चित्रण किया है ।

जायसी की सरलता, हृदयस्पर्शता, अनुकम्पाशीलता एवं विचारशीलता इनके काव्यों से पूर्ण रूप से प्रकट होती है । ये अपनी समय के सिद्ध फकीरों में गिने जाते थे । और हिन्दू मुसलमान दोनों की श्रद्धा के पात्र समझे जाते थे । उनका ईश्वरीय नियंत्रण में अविचल विश्वास था । वे एक दूसरे के उत्सव तथा दुःख सुख में सम्मिलित होते थे[1] ।

'पद्मावत' के कुछ परिशिष्ट प्रतियों के सम्बन्ध में डा० वासुदेव शरण अग्रवाल का कथन है ——'पद्मावती' विश्व व्यापी ज्योति का नाम है । उसके अनेक प्रतीक ब्रह्माण्ड में व्याप्त हैं । यही ज्योति चन्द्रमा के रूप में उदित होती है । यही शिवलोक की मणि है जो सिंहल द्वीप के प्रकाशित करने के लिए उत्पन्न होती है[2] ।

सूफियों ने जो प्रतीक योजना की है उससे उनकी प्रच्छन्न आशा कलावारा और दर्शन पर विशद प्रकाश पड़ता है । काव्य पर इतना अटल विश्वास की तत्कालीन विजित भारत की अपने भीम-प्रयत्नों की निरन्तर असफलता पर भी जीवित बने रहने की अपने नवीन परिस्थितियों से समझौते कर लेने की वृत्तियों का परिचायक मात्र है । सच बात तो यह है कि जायसी बहुश्रुत थे, सब प्रकार के मनुष्यों के साहचर्य में रह चुके थे, उन्होंने सबकी बातें सुनी स्मृति-पटल पर अंकित कर ली और प्रसंगानुकूल सदुपयोग कर अपने कथानक को आकर्षक बना लिया । भारतीय विचार धारा पर न सही हिन्दी-साहित्य पर जायसी का ऋण हमेशा रहेगा । इसका महत्व उस समय और बढ़ जाता है जब कि हम देखते हैं कि लगभग उसी दधि एवं काल में जायसी से लगभग तीस वर्ष पश्चात् तुलसीदास जी ने अपने काव्य की रूप रेखा उन्हीं के आधार पर ग्रहण की क्या भाषा, क्या छंद, क्या प्रासंगिक कल्पनाएँ ——सभी में जायसी की स्पष्ट छाप है ।

आजकल की बोली में कहना चाहें तो हम कह सकते हैं कि

1- सुल्तानपुर प्रान्त का गजेटियर पृष्ठ 72 ।
2- पद्मावत प्राक्कथन ——डा० वासुदेव शरण अग्रवाल पृष्ठ 38 ।

महाकवि बैसवाड़ी अवधी के प्रगतिशील कवि हैं । उन्होंने जनता की भाषा को अपनाया, उनके मनोरंजन की सामग्री प्रस्तुत की, उनके धार्मिक, सामाजिक, प्रतिक्रियों पर आलोचना पर आलोचना की और उनके एक लक्ष्य सुझाया । भारतीय ग्राम्य वातावरण का इतना सुरम्य चित्रण उनके उत्सव, मनोरंजनों, उत्सवों का इतना सजीव चित्रण उनकी धार्मिक विडम्बना विमूढ़ता शिथिलता, उच्चता का इतना स्पष्टीकरण अन्यत्र दृष्टिगोचर नहीं होता । 'बहुमवत' के कवित्त स्त्रोतों को पढ़ते समय अवध ग्राम की प्रकृत रम्य स्थली नेत्रों के सम्मुख उपस्थित से होने लगते हैं ।

कवि स्वयं धार्मिक तथा सामाजिक प्रतिक्रियों से उत्पन्न विमूढ़ता ग्रसित हैं जिसका मन यहाँ के वातावरण में पूर्णतया रम गया था । इसीलिए आचार्यों को हिन्दी के प्रथम महाकाव्यकार और हिन्दी को आदि युगीन महाकवि माना जाता है ।

कवि उसमान का परिचय :- चिश्ती परम्परा के हिन्दी सूफी कवियों की रचनाओं में मलिक मुहम्मद जायसी के अनन्तर सूफी कवि उसमान का विशेष महत्व है । कवि उसमान गाजीपुर नगर के निवासी थे । इनके पिता शेख हुसैन शाह थे । इनके चार भाई —— शेख अजीज, शेख - इमानुल्लाह, शेख फैजुल्लाह और शेख हसन थे । ये पाँचो भाई अपनी पृथक विशेषता वाले थे —— शेख अजीज विद्वान, शीलवान तथा दानशील थे । शेख इमानुल्लाह योग साधन में रत थे । शेख फैजुल्लाह पीर(गुरू) थे । शेख हसन संगीतज्ञ थे । कवि अपना परिचय साहित्यिक के रूप में देता है । उसका यह कथन है —— इस नश्वर संसार में केवल वचन ही अमर है, वचन अमृत के समान है जिस पीकर कविगण भी अमर हो जाते हैं; उन्होंने विद्यालाभ करके साहित्य रचना की ओर ध्यान दिया ——

कवि उसमान बसै तेहि गाऊँ, शेख हुसैन लसै जग लाऊँ,
पाँच भाई पाँचो बुधि ही पै, एक एक भाँति सा पाँचो सोपै।।
शेख पढ़े लिखि जाना, सागर सील ऊँच कर दाना,
मानुल्लाह विधि मारग गहा, जोग साध जो मौन होई रहा।।
शेख फैजुल्लाह पीर अपारा, मनैन काहु गहे हथियारा,
शेख हसन गाए न भल आहा,गुन विद्या कई गुनी सराहा।
शील उदधि पुनि सबै सुजाना, जो कोऊ मिला सोई पैजाना।।

सुमेर बाऊँ उत्साह चित , मिले होई जिसांति,
पाँच भाई जनु पाँच मिऊँ, अपनो अपनो भाँति।।

आदि हुआ विधि माथे लिखा, अक्षर चारि, पढ़े हम सिखा,
मोई चाऊ ऊठा पुनि होए, होऊँ अमर यह अमिरित पोए।।

कवि शेख उसमान अपने नगर गाजीपुर का वर्णन करते समय वहाँ की भौगोलिक स्थिति निवासी तथा वहाँ की सुख शान्ति का वर्णन किया है । वह लिखते हैं कि गाजीपुर गंगा और गोमती के संगम पर बसा है । उदापर में वहाँ देवताओं ने तपस्या की थी :-

गाजीपुर उत्तम अस्थाना, देव स्थान आदि जग जाना,
गंगा मिलि जमुना तेहि आई, बीच मिली गोमती सुहाई।
× × ×
बसहिं लोग बहु बहु विज्ञानी, सैयद, शेख बसै गुरू ज्ञानी ।
× × ×

इस प्रकार गाजीपुर का चित्रण कवि ने बड़े समृद्ध पूर्ण प्रस्तुत किया है ।

:- चित्रावली — छंद - दुहा ।।, ।2 ।

स्थिति एवं रचना काल :- जायसी की पद्मावत के पश्चात इस परम्परागत पद्धति पर कवि उसमान द्वारा "चित्रावली" काव्य की रचना हुई । यह कृति 1022 हिजरी (सन 1613ई0) में लिखी गई है । कवि उसमान ने 'चित्रावली' का रचना काल स्वयं अपने छन्द में दिया है :-

सन सहस्त्र बाइस जब भऐ, तब हम बचन चारि एक कहे,
कहज करेज तौहू का धनी, सोई जान पीर जिह जानी [1]।

कवि ने 'साहेवक्त' की प्रशंसा के अन्तर्गत जहाँगीर की प्रशंसा की है।

कहीं न जग धनियाऊ कोउ, सुनि अचरज संसार,
होहि छहौं रितु एक ठौं , जहाँगीर दरबार[2]।

इसके अतिरिक्त राज्य विस्तार तथा न्याय प्रियता की भी चर्चा कवि ने यथेष्ठ की है, व्यापारिक सम्बन्ध तथा सुख समृद्धि का वर्णन भी मिलता है । अनुमान है कि जहाँगीर के दान की प्रशंसा सुनकर सम्भवतः कवि उसमान स्वयं भी एक बार दरबार में गए होंगे और अपने अरब, इराक, मिस्र के लोगों से दरबार में वार्तालाप की होगी :-

मुस्द्दीन मदिपत बारी, जाकर आन मही मँह सारी,
आवहि अरबी और इराकी, रस मिश्री कस्तूरी खर्ताकी[3]।

गुरु परम्परा :- गुरु परम्परा का वर्णन करते समय कवि उसमान ने सिद्ध दायक नारनौल के शाह निजाम को अपना पीर(गुरु) बताया है:-

शाह निजाम पीर सिद्धदाता, निकट तेज जिमि रवि पर भाता,
नारनौलि भीतर अस्थाना , उदै अस्त लई कोई जाना ।
गहि भुज कोहँ पार जौ, बिनु साहस बिनुरास,
करतो सकल जहाज के , चलो शाह निजाम[4]।

चिश्तिया शाखा के इतिहास के गुरु शेख निजाम का उल्लेख है जिनकी समाधि नारनौल में वर्तमान है । शेख निजाम की मृत्यु सन 1591 ई0 में हुई थी[5]। यह अपने समय के प्रसिद्ध सूफी थे जो भी आपके शरण में आता कृपा, आशीर्वाद, व्यक्ति को जीवनमुक्त बना देते थे । नारनौल मुस्लिम युग में शिक्षा का एक अच्छा केन्द्र रहा है । शेरशाह ने यहाँ सन 1520 ई0 में एक मदरसा (स्कूल) भी कायम किया था[6]। इस प्रकार कवि उसमान ने दोनों गुरु शेख निजाम से ग्रहण की थी । कवि उसमान ने एक अन्य गुरु सैय्यद बाबा हाजी का वर्णन किया है ।

1- चित्रावली छन्द - 33
2- ,, ,, - 33
3- ,, ,, - 6
4- ,, ,, छन्द9
5- मुसलिम ट्रेडिशन्स एण्ड प्रोफेसन्स पृष्ठ - 342

भी कवि ने की है । इसके पश्चात् मुहम्मद साहब के महत्व का वर्णन किया है —

आपन अंस कीन्ह कुई ठाऊ, एक कथरा मुहम्मद नाऊ,
जो परान संसारक माहीं, कस न कई तेहि संग परछाहीं[1]।

परमात्मा ने पहले अपने नूर से " नूरूल मुहम्मदिया" उत्पन्न किया इबलीस व्दारा आदम के विरोध चर्चा भी कवि ने किया है । मुहम्मद साहब की परछाहीं नहीं थी तथा उन्होंने चांद के दो टुकड़े किए थे । उनको जब किसी ने विष दिया तो विष का ग्राम हाथ में बोल उठा था । ये सभी चमत्कार का वर्णन एवं मुहम्मद साहब के महत्व की स्थापना कवि उसमान व्दारा :-

संग्या करन चांद मनियारा, वा विखण्ड जानै संसारा,
जो कपटी बीजन विस विसा, बोलि उठा [illegible][2]।
करनी कीटी मोर सब, का कोई विनवौं तोहिं,
अपनी उम्मति जानि कै, लै निवाहब मोहिं[2] ॥

आत्म परिचयात्मक रूप में अपने नगर गाजीपुर तथा अपने पिता एवं भाईयों का परिचय भी कवि ने किया है । कवि ने कथा आरम्भ में प्रस्तावना लिखते समय रूप, प्रेम और विरह तत्वों की चर्चा की है, अन्य कथाओं में परम्परा निर्वाह के बाद कवि सीधे ढंग से कथा के पात्रों का परिचय देकर कथा आरम्भ कर देता है, किन्तु इस दृष्टि से यह नवीन है । कवि अपने को अज्ञान बालक की भांति बताता है जो प्रेम कथा कहकर अज्ञान अंधकार का निवारण चाहता है :-

मैं अनजान जब बाल समय, ज्ञान न कछु सीखाय,
कहौं कहानी प्रेम की, जेहि निसि जाय विहाय[3]॥

कवि ने स्थान स्थान पर प्रेम के स्वरूप की चर्चा की है । प्रेम का आधार रूप है । जहां भी सौन्दर्य या रूप होता है वहीं प्रेम उत्पन्न हो जाता है । दीपक की ज्योति पर पतंगा जिस प्रकार बरबस आकृष्ट होता है उसी प्रकार रूप की ओर प्रेम आकृष्ट होता है । केतकी की कली पर भ्रमर के गुंजन के सदृश ही, रूप और प्रेम का सम्बन्ध है :-

जाहीं रूप जग बनिज पसारा, आई प्रेम तेह कोय ब्योहारा,
दीपक ज्योति प्रेम उजियारा, प्रेम पतंग आनि तेह जारा ।
रूप वास भा केतिक केवा, प्रेम भौंर कीजिव परछेवा[4]।

परमात्मा के रूप या सौन्दर्य की ओर साधक भी आकृष्ट होता है । वह इस सृष्टि के सौन्दर्य को देखकर, इसके कर्ता के रूप का स्मरण

1- चित्रावली पृष्ठ - 6
2- " " - 6
3- " " -14

करता है । इस प्रकार साधक का प्रेम भी रूप की ओर आकृष्ट करता होकर जन्म पाता है :-

जेहिका चित्र अस जिऊ लेनिहारा, दहुँकस होइहि सिरजनहारा[1] ॥

प्रेम को बल एवं गति देने वाला विरह है । प्रेम को आग सुलग रही, विरह रूपी पवन उसे बढ़ावा देता है, प्रेम रूपी अंकुर होतेही विरह रूपी नीर उसे पनपाता है । प्रेम दीपक के ज्योति को विरह निरन्तर उकसाता है । प्रेम और विरह का निरन्तर साथ है ——

रूप प्रेम मिलि जो ------ एक मते जो मानहु रंगा[2] ॥

कवि ने प्रेम की दशा का वर्णन करने के पश्चात प्रेम की सफलता के लिए धैर्य एवं दृढ़ निश्चय आवश्यक बताया है । उसकी उपमा देते हुए कहता है कि धैर्यवान व्यक्ति सुमेरू पर्वत की चोटी पर सरलता पूर्वक चढ़ सकता है:—

धीरत धरि जो लेई पथ हेरी, चढ़ै जैस सुंग सुमेरी[3] ।

लक्ष्य के दूर होने पर भी कवि कहता है कि दृढ़ निश्चय से उसे प्राप्त कर सकता है :—

जेहि कहु खोजै कोऊ, एक मन एक चित लाई,
होई दूरि जो अति तऊ, नियरहि मिलै सो आई[4] ॥

इस प्रकार हम देखते हैं कि कवि का अनुभव एवं सतर्क लेखनी के फलस्वरूप भावों की व्यंजना बड़े मार्मिक ढंग से की सफल हुई है । आतुरता का वर्णन करने में कवि ने जिस उपमा का सहारा लिया है वह स्वयं अपने में ही बहुत अधिक समर्थ है ।

महत्व :- कवि उसमान की रचना ("चित्रावली" जो श्री जगमोहन वर्मा द्वारा सम्पादित नागरी प्रचारिणी सभा काशी द्वारा प्रकाशित हुई है । रचना का कथानक कवि कल्पित है, जैसा कि कवि ने स्वयं निम्नांकित पंक्तियों में कहा है:-

कथा एक मैं किए उपाई,
कहत मीठ औ सुनत सोहाई ॥

कथानक सर्वथा कल्पित होने पर भी इसमें कवि ने बड़े कौशल से सूफी साधना का आध्यात्मिक रूप दिखाया है । राजकुमार सुजान एक साधक है जो एक लम्बी और अत्यन्त कष्ट दायक साधना के पश्चात् अपनी अभीष्ट वस्तु- चित्रावली को प्राप्त करता है । इस में कवि ने नगर, समुद्र, विरह, आदि का बड़ा सुन्दर सजीव चित्रण किया है । काव्य कला की दृष्टि से 'चित्रावली' का महत्व "पद्मावत" से किसी प्रकार भी न्यून नहीं है । वसन्त/वर्णन का महत्व

(1)- चित्रावली पृष्ठ-13 (2)- चित्रावली पृष्ठ - 13

की पंक्तियाँ इस प्रकार हैं :-

ऋतु बसन्त नौतन जग फला,
जहाँ तहँ और कुसुम-रंगबूला।
आहि कहाँ सौ बरन हमारा,
जेहि बिनु बसंत बसन्त उजारा॥

कवि ने निम्न पंक्तियों में बड़ी कुशलता से नायिका दर्शन के माध्यम से ब्रह्म-दर्शन की बात कही है :—

कहा कहौं कुछ कही न जाई,
हिय सोरत बुधि जाई हेराई।
कहत न बनै कछु मैं देखा ,
गूँगा का सपन कौ मीर लेखा॥

इस प्रकार से कवि ने अपनी काव्य रचना द्वारा विश्व को यह सन्देश दिया है स्वयं कवि के शब्दों में" चित्र देखकर चित्रकार को समझा जा सकता है पर चित्र में जो तिरा है, उसे निर्मल दृष्टि रखकर ही खोजा जा सकता है[1] चित्रावली एक चित्र है जिसे विधाता ने रचा है[2] "।

कवि उसमान ने प्रेम के आध्यात्मिकता के विषय में अपने काव्य में कहा है ------ " इस मार्ग में चार देश पड़ते हैं जैसे-जैसे देश हैं, उनके वैसे वैसे भेष ही बनाने पड़ते हैं । इन चार देशों में नगर हैं इन चार नगरों में चार कोट हैं जो इनकी ओट में छिपे हुए हैं, जिसने आचार विचार को नहीं जाना बेकटमारी द्वारा मार्ग में ही लुट जाता है[3]" करोड़ों में से एक इस नगर में पहुँच पाता है --------इस पथ में चलने वाले का मुख भोजन बिना सूख जाता है पानी के बिना हृदय कमल कुम्हला जाता है । शीष वसन भी उसके अंग में अच्छा नहीं लगता । जब कंथा को कैसे उठा सकता है[4]। वास्तव में यह कठोरता न होती तो सूफी कवियों का यह अभिष्ट सिध्द नहीं होता जोकि साधना कोकठिन से कठिन बताया जाता है । सौ सदैव से सूफी सन्तों का जीवन सूत्र रहा हैकिन्तु कवि के सन्देश देने का ढंग अन्यों से पृथक है । उन्होंने प्रत्येक बात इस ढंग से कही है जैसे इसके पूर्व अन्य किसी ने कही हो । यही कारण है कि 'चित्रावली' पूर्ववर्ती सूफी काव्यों की एक कड़ी के रूप में ही प्रस्तुत हुई है ।

1- चित्रावली छंद 167
2- चित्रावली छंद 168
3- चित्रावली छंद 204
4- चित्रावली छंद 213

: तृतीय अध्याय :

चिश्ती परम्परा के सूफी कवियों की हिन्दी रचनाओं का काव्य सौन्दर्य

अमीर खुसरो की सम्पूर्ण साहित्य साधना का मूल तंत्र समन्वय ही रहा है । भाषा के क्षेत्र में, कविता के क्षेत्र में, सामाजिक क्षेत्र में और अन्य सभी क्षेत्रों में मानवतावादी दृष्टिकोण रखकर सबका समन्वय करना ही उनका महान लक्ष्य रहा है । यद्यपि वे कई भाषाओं के विद्वान थे और उन्होंने कई भाषाओं में कविता रची है फिर भी देश-भाषा, जन भाषा हिन्दी(हिन्दवी) के प्रति उन्हें इतनी अधिक ममता थी कि उन्होंने फारसी और हिन्दी-मिश्रित समन्वयात्मक भाषा-शैली का प्रयोग करके अपने समकालीन समाज में भाषाई एकता लाने का महत्वपूर्ण कार्य किया । हिन्दी में रचित उनकी रचनाएं इस बात के लिए प्रमाणस्वरूप हैं कि इनहें हिन्दी भाषा के प्रति कितना अगाध प्रेम था । खुसरो की सबसे प्रसिद्ध कीर्ति जिसे प्रेम कथा के साथ आध्यात्मिक रूपक भी कहा जाता है अलाउद्दीन के पुत्र खिज्र खाँ और देवलरानी की प्रेम कहानी है । पहेलियाँ, मुकरियाँ, सखुन आदि के लिए अमीर खुसरो का नाम समस्त साहित्य में प्रसिद्ध है । इनका मूल उद्देश्य विनोद प्रियता, रसिकता, मनोरंजन, सूक्ष्म परख और कालयापन होता है । दो सुक्ते भी खुसरो की चमत्कार शैली के अच्छे उदाहरण हैं इनमें भी बुद्धि की परीक्षा होती है :-

य

गेहूँ क्यों न खाया , डोम क्यों न गाया? भला न था ।
अनार क्यों न चखा, वजीर क्यों न रखा? दाना न था ।
रोटी क्यों सूखी, कपड़ा क्यों उजड़ा? खाई न थी ।
सितार क्यों न बजा, औरत क्यों न नहाई? बरदा न था ।

सावन के महीने में हिन्दू नारियाँ जिस प्रकार प्रेम गीत गाकर अपने सुहाग का वरदान मांगती हैं, खुसरो की दृष्टि में वह सुहाग हर स्त्री के काम्य होना चाहिए । भारतीय नारी के लिए सावन के महीने में पीहर जाने की बलवती इच्छा को खुसरो ने लोकगीत की शैली में बाँधा है :-

अम्मा मेरे बाबा को भेजियो री कि सावन आया।
बेटी तेरे बाबा तो बूढ़ा री कि सावन आया ।
अम्मा मेरे भैया को भेजियो री कि सावन आया ।
बेटी तेरा भैया तो बाला री कि सावन आया ।

अमीर खुसरो की गद्य साहित्य में "खज़ाइनुलफुतूह", अफ़ज़ल-अफ़ज़ल वाइद और एजाज़ुल- खुसरवी महत्वपूर्ण हैं । एजाज़-ए-खुसरवी एक विशेष प्रकार की गद्य रचना है, जिसकी तुलना 'हयाते अमीरे खुसरो नामक उर्दू ग्रन्थ के लेखक मोहम्मद खाँ कुरजवी ने फिरदौसी के 'शाहनामा' तथा निजामी के 'सिकन्दरनामे'

आदि ग्रन्थों से की है[1]। 'दि एन्सायक्लोपीडिया आफ इस्लाम' ने इस ग्रन्थ का वर्णन 'एनेसिक्लोपीडिक आफ इलगन्ट प्रोज कन्टेन्ट' कह कर किया है । इन दो रचनाओं से दो 'खजाइनुल फुतूह' का महत्व अधिक माना जाता है ।

खुसरो दरबारी आश्रित के साथ कवि एवं योद्धा दोनों । युद्ध वर्णन के समय वर्णन शैली का प्रयोग किया है जो रोचक है परन्तु उसमें एक दोष बहुत खटकता है वह है — अतिशयोक्ति — जैसे :-

1- चारों ओर पहाड़ियाँ थीं, स्वर्ग सितारे के/तार से अधिक चारों ओर ।

2- उसने यह सूचना देनी कि मेरे पास इतना सोना है कि जिससे हिन्दुस्तान के सभी पर्वत ढके जा सकते हैं[2]।

इसके अतिरिक्त पहेलियों में जिस प्रकार के विरोधाभास तथा शैली की जो योजना होती है, उसी प्रकार उनमें कल्पना विलास के दर्शन भी होते हैं उदाहरणार्थ :-

1- सच्चाई को इस प्रकार परिपूर्ण कर दिया कि न तो कुछ गैर उसे अपनी लेखनी से लिख सकता है और कुछ ग्राह्य अपने तराजू से उसे तौल सकता है ।

2- एक दर्जी नियुक्त किया गया जो चकवाली दुकानदारों से न्याय के सीधे से काम करता था । उसके कलम्बक गुंगे खरीदने वाले भी बोलने लगे थे । यदि कोई कम तौलता, बड़ी वजन (तोड़ा) उसके गले में तौक (फन्दा) बन जाता था यदि इस प्रकार की वे न मानते तो तौक तलवार बन जाता ——— ... (दुकानदार) तौड़े के चोटी को अपने हृदय के चारों ओर लोहे का किला समझने लगे और चोटी के शब्द उनके प्राणों के लिए जहर के समान थे ।

3- जब मेहमूद ने रात्रि के केशों में से मनुष्य के सिर के बाल के समान अत्यधिक लम्बाई देखी तो उसके शरीर के रोम (बाल) कैंची के बालों के समान खड़े हो गए । वह घुंघराले बालों के समान गिरता पड़ता किले की ओर भागा[3]

अमीर खुसरो की गद्य रचना में साहित्य तथा इतिहास का संगम हुआ । व्यक्ति वर्णन, स्थल वर्णन, तथा घटना वर्णन के तीन प्रमुख घटक हैं । घटना वर्णन में अतिशयोक्ति के कारण अद्भुत रम्यता भी आ गई है ।

1- इतिहास अमीर खुसरो- नबी मुहम्मद खाँ खुरजवी पृष्ठ 137 । प्रकाशक, किताबस्तान, लाहौर ।

2- खिलजी कालीन भारत, पृष्ठ 162, 164

3- खिलजी कालीन भारत, पृष्ठ 155, 156 और 167

। मौलाना दाऊद की काव्य-शैली ।

डा० माता प्रसाद गुप्त ने 'चंदायन' की भाषा का भी विस्तार से अध्ययन किया है और यह सिद्ध किया है कि 'चंदायन' की भाषा अवधी है और जायसी की भाषा से यह मिलती जुलती होते हुए भी किंचित पूर्व की विकास का आभास देती है।[1] मौलाना दाऊद ने चंदायन में नख-शिख के माध्यम से परम सौन्दर्य को अभिव्यक्त करने का जो प्रयास किया उसका प्रभाव परवर्ती काव्य— पद्मावत, पद्मावती तथा चित्रावली पर भी पड़ा । मौलाना दाऊद ने जो शैली अपनाई थी वह परवर्ती कवियों के लिए आदर्श बनी । इस दृष्टि से चंदायन के नख शिख वर्णन का विशेष महत्व है । चंदायन की अनेक पंक्तियां उपमाएं और कल्पनाएं परवर्ती कवियों ने ग्रहण कर ली । दूसरी विशेषता यह है कि नख-शिख में आध्यात्मिक संकेत विद्यमान हैं।

डा० माता प्रसाद के मतानुसार मौलाना दाऊद का कवि रूप अपने वास्तविक रूप में प्रकट हो जाता है और उनके इस संस्करण से सोलहवीं शताब्दी की अवधी भाषा का प्राचीन रूप समझने में अधिक सहायता मिलती है ।

अवधी भाषा में प्रथम महत्वपूर्ण प्रेमाख्यान का प्रेमपूर्ण लेखन मौलाना दाऊद के द्वारा हुई । उनके द्वारा प्रेमाख्यान का विकास जायसी लिखित 'पद्मावत' के साथ भी हुआ । जायसी से प्रोत्साहन पाकर उनके परवर्ती सूफी कवियों ने अनेक प्रेमाख्यान लिखे । शैली और भाषा की दृष्टि से इन काव्यों में बहुत साम्य है और ये सभी भारतीय काव्य परम्परा से प्रभावित हैं ।

यद्यपि इस सूफी काव्य में निहित आध्यात्म भावना को पृथक कर दें तो हमें इनका प्रेम निरूपण भारतीय परम्परा से भिन्न नहीं लगेगा । सूफी कवि या मौलाना दाऊद ने अलौकिक प्रेम की अभिव्यंजना लौकिक प्रेम के माध्यम से की है । काव्य साहित्य शृंगार रस का आगार है जिसमें उसके दोनों पक्ष संयोग और विप्रलम्भ अपनी पूर्ण वैविध्यता के साथ वर्तमान हैं । उनका यह शृंगार लौकिक आध्यात्मिक दोनों रूपों में विकसित हुआ है ।

1- चंदायन , भूमिका पृ० ठ- 72

: शेख अब्दुल कुद्दूस — रचना शैली :

शेख दूर कृत सद नामा में केवल एक दोहा (15) ऐसा उपलब्ध है जो कबीर एवं दादूदयाल के काव्य में भी साधारण परिवर्तन के साथ मिल जाता है[1] सदनामा में यह दोहा इस प्रकार है :-

जागा गुरू जो दूनना, चेला काय तिराना,
कथे अंधा ठेलिया दोऊ कौज पुराना ।।

बरलिन की पाण्डुलिपि में इसी दोहे को इस प्रकार लिखा गया है :-

जिसका गुरू दूनना, चेला काय तिराई,
कथे अन्धा ठेलई, दूनों कूप पराइ ।।

कबीर का रहस्यवाद सदनामा में शेखअब्दुल कुद्दूस के आध्यात्मिक गुरू शेख अहमद अब्दुलहक (मृत्यु 1434ई0) द्वारा रचित तीन दोहों (93,94,95 का संकेत मिलता है[2]। इसके अतिरिक्त अन्य 'हिन्दवी' रचनाओं में पंजाबी, राजस्थानी, बुन्देली, ब्रज, अवधी, भोजपुरी आदि क्षेत्रीय बोलियों के प्रभाव को देखा जा सकता है 'हिन्दवी' को साहित्यिक की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाने में मुसलमान सूफी कवियों का विशेष योगदान है, सदनामा में इसका प्रत्यक्ष संकेत मिलता है । इस प्रकार सदनामा को हिन्दवी कविता का क्रम के अध्ययन की दृष्टि से अपना एक विशेष महत्व है ।

रूपक योजना तथा प्रतीक योजना :- सदनामा की हिन्दी कविताओं में जिन प्रतीकों को ग्रहण किया गया है उसमें अधिकांशतः परम्परागत है । कुछ भारतीय लोक जीवन और काव्य की परम्परा से आए हुए और कुछ फारसी तथा अरबी(इस्लामी) प्रभाव से गुंफित हैं । सदनामा में'लैला और मजनू' के प्रतीकों से आत्मा और परमात्मा के एक मेल होने की बात कही गई है ।

छन्द तथा राग :- सद नामा की हिन्दी कविता में 'सबद' दोहरा, चौपद ठकदा, श्लोक, रेखता तथा चौपाई का उपयोग हुआ है । दोहरे शीर्षक से विषम चरणों में तेरह तथा समचरणों में 'यारह मात्राओं के साथ मिलती हैं, किन्तु कहीं इन नियमों का पालन नहीं किया गया है । उपर्युक्त छन्दों के अतिरिक्त विभिन्न रागों के शीर्षक से भी सद नामा की अनेक हिन्दी रचनाएँ लिखी गई हैं । रागों को लेकर प्र थम प्रमाणिक विवरण गुरू ग्रन्थ साहब में माना जाता है । बाबा नानक तथा शेख अब्दुल कुद्दूस नंगौही एक दूसरे के समकालीन थे सदनामा में पदों के अतिरिक्त 16 मात्रिक चौपाई छन्द को भी रागों में बांधने की प्रवृत्ति बहुत अधिक प्रचलित थी । गुरूग्रन्थ साहब और सदनामा में इसकी विशेष झलक मिलती है ।

मलिक मुहम्मद जायसी — भाषा, काव्य एवं शैली

पद्मावत काव्य की रचना प्राकृत के जैन चरित काव्यों तथा फारसी की मसनवी शैली के अनुकरण पर हुई है, जिसमें पाश्चात्य 'रोमिक' और भारतीय 'महाकाव्य' के भी अनेक विशेषताएँ विद्यमान हैं । इसका नायक क्षत्रियोचित गुण सम्पन्न राजारत्न सेन है । इसमें शृंगार, करुण और वीर तीनों रसों का पूर्ण समावेश है । कथानक का प्रवाह कल्पित और उत्तरार्द्ध ऐतिहासिक है । इसमें कथा-सूचक वचन भी स्थान स्थान पर मिलते हैं । सूर्य, चन्द्र, रात्रि, मृगया पर्वत, वन, सागर, ऋतु, सम्भोग, विप्रलम्भ, योगी, रण-प्रयाण, विवाहादि का भी यथा यथा वर्णन मिलता है । परन्तु इसमें दोहा चौपाई के अतिरिक्त न तो अन्य छन्द प्रयुक्त हुआ है और सर्ग विभाजन ही है । इसमें जितने चरित्र हैं प्रेम साधना को पूर्ण तक पहुँचाने में सहायक हैं । बाधक चरित्रों भी प्रेम को तीव्र और शाश्वत बनाता है । रत्नसेन आध्यात्मिक शिखर पर पहुँचकर पुनः संसारी बन जाता है । उसके जीवन वैराग्य में न होकर संघर्ष में होता है । यहाँ जायसी इस्लामी मत के अनुकूल लोकोन्मुखी हो जाते हैं । वैराग्य को भारतीय मुसलमान महत्व नहीं देते । संसार में रहकर साधना करते रहना उनका लक्ष्य है ।

जायसी ने मूलतः ठेठ अवधी भाषा में अपने ग्रन्थ लिखे हैं । जो उनके प्रेम गाथा के सर्वथा अनुकूल प्रमाणित हुई है । उन्होंने अपने पूर्ण काव्य की रचना प्रायः चौपाई छन्द की भाषा में ही की है । इनकी अलंकार योजना बड़ी सुन्दर है । लम्बे लम्बे वर्णन कथा प्रवाह में बाधा नहीं डालते । जहाँ कहीं सामासिक शब्दों का प्रयोग किया है, वहाँ वे संस्कृत -प्रणाली की अपेक्षा फारसी -प्रणाली से ही अधिक प्रभावित जान पड़ते हैं :——

" भा निसार किरन - रवि फूटी "

उपरोक्त पंक्ति में 'किरन -रवि' सामासिक शब्द है जो संस्कृत प्रणाली के अनुसार 'रिव किरन' होना चाहिए, पर उन्होंने फारसी प्रणाली के अनुसार 'किरन रवि' किया है । इस प्रकार के अनेक उदाहरण उनकी रचना में मिलते

जायसी की भाषा कहीं कहीं फारसी के शब्द मिलते हैं, पर ऐसे प्रयोग बहुत कम हैं । उन्होंने बरसक लोक प्रचलित अवधी का प्रयोग किया है । उनके काव्य माधुर्य में अवधी का अपनापन है ।

जायसी ने अलौकिक प्रेम की अभिव्यंजना लौकिक प्रेम के माध्यम से की । अतः उनके काव्यों में प्रतीकों और बिम्बों का प्रयोग स्वाभाविक हो गया है । अनेक स्थानों में वर्णन की अभिव्यक्तिता के लिए भी उन्होंने प्रतीकों और बिम्बों

का प्रयोग किया है ।

प्रेमा-मार्गी काव्य साहित्य शृंगार रस का आगार है । जिसमें उनके दोनों पक्ष संयोग और विप्रालम्भ अपनी पूर्ण वैविध्यता के साथ वर्तमान है । उनका यह शृंगार लौकिक और आध्यात्मिक दोनों रूपों में विकसित हुआ है । इस रस के अतिरिक्त जायसी के काव्य में वीर, करुण, रौद्र, शान्त एवं विभत्स रस का समावेश भी हो गया है ।

: कवि उसमान की रचना एवं भाषा शैली:

कवि उसमान कृत चित्रावली की भाषा अवधि है । बोल चाल के शब्द जैसे :- लोन, पोवरा, आता, बेगर, केव, मेहरिख के साथ संस्कृत के शब्दों का भी प्रयोग किया है । ग्रन्थ में अरबी, फारसी के शब्द भी मिलते हैं जैसे :- साफ तथा सोना । कवि उसमान ने कहावतों का प्रचुर प्रयोग किया है । संस्कृत शब्दों में 'तत्मीत','पंनच' ऐसे शब्दों का प्रयोग है । सौरि, राउत एवं लोचनह ऐसे तत्भव शब्द भी प्रयोग हुए हैं । कहावतों के प्रयोग से भाषा अधिक व्यवहारिक हो गई है । साथ ही साथ भावों की सफल व्यञ्जना हुई है । सादृश्यमूलक अलंकार में प्रतीप, हेतुत्प्रेक्षा, अतिशयोक्ति, उल्लेख, रूपक, उपमा का प्रयोग विशेष रूप से कवि ने किया है ।

कवि उसमान ने जायसी की ही शैली का पूरा पूरा अनुसरण किया है । आपकी कहानी सर्वथा मौलिक और कल्पित है । आपने काबुल, रूम आदि का उल्लेख करते हुए औरंगजेब के शान-शान का भी वर्णन किया है[1]। सन 1612ई0 में, अतः कवि को अपने समय की पूरी जानकारी होना भी सिद्ध होता है । वह कहते हैं :-

> चलें दीप देखा बंगाला, जहां जाई नहिं कठिन करेजा,
> ऊँच नीच का धन सम्पत्ति हेरा, मद वराह भोजन जिनकेरा[2]

कवि उसमान ही एक ऐसे कवि हैं जिन्होंने नगरों की वास्तविकता भौगोलिक स्थिति तथा विशेषताओं का उल्लेख किया है । जिससे कवि के विविध ज्ञान का पता चलता है :-

> जो पूरब दिस कई मुँह फेरा, परि लेहिं आई से मथुरा हेरा,
> ब्रिन्दावन वँह मई ढूँढे योगी, जैसे गोपी कृष्ण वियोगी[3] ।

जायसी के समान कवि उसमान ने भी षटऋतु वर्णन की योजना के साथ बारहमासे का वर्णन करके एक ओर जहां कवि ने परम्परा का पालन किया

1- काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित 'चित्रावली' की भूमिका ।
2. 3 :- चित्रावली पृष्ठ -160

दूसरी ओर विरह की व्यापकता का भी परिचय दिया है :-

ऋतु बसन्त नौ तन बन फूला,
जैठ तेंह और रैन रस मूला[1] ॥

कवि ने इस विरह वर्णन की योजना भी सुन्दर ढंग से की है । विरह की अनेक परिस्थितियों में मानव भावों के साथ प्रकृति की सामञ्जस्य दिखाने में कवि को पूर्ण सफलता मिली है । राग-रागिनियों की चर्चा कवि ने की है । 'काम शास्त्र' की जानकारी का परिचय कवि ने 'कामशास्त्र खण्ड' में कराया है । इसी के अन्तर्गत कवि चित्रिनी नारी का वर्णन इस प्रकार करता है :-

प्रेम पेंड अति दुर्गम ऊँचा, सहस मांह कोऊ एक पहुँचा [2]।

कथा प्रसंग में कवि ने रहस्यवाद का बहुत अच्छा पुट दिया है । सामान्य रूप से रचना और शृंगारिक है , किन्तु पारमार्थिक दृष्टि से परमप्रेम तक पहुँचाने वाली भी है । कवि उसमान मुस्लिम होने के कारण हृदय की शुध्दता कवि को अत्यन्त प्रिय है :-

हाजी संग मिलि गए मदीना,
का का गए जो साफ न पीना[3]।

1- चित्रावली पृष्ठ 54
2- ,, ,, ,, : 211
3- ,, ,, ,, : 54

: चतुर्थ अध्याय :

उपसंहार :- चिश्ती परम्परा के हिन्दी सूफी कवियों की प्रेमाख्यानों के माध्यम से अपनी बात कहने में कठिनाई नहीं हुई । उनका मुख्य उद्देश्य जनजीवन में प्रेम का संदेश फैलाना था । सम्पूर्ण साहित्य में सौन्दर्य की एक स्वस्थ प्राण धारा दिखाई देती है । यही सौन्दर्य दृष्टि साहित्य की आत्मा होती है । जिस साहित्य में सौन्दर्य की अनुभूति होगी, पकड़ होगी, अभिव्यक्ति होगी वह निःसन्देह उच्च कोटि का काव्य होगा । अमीर खुसरो की " खिज्र खाँ व देवल रानी मौलाना दाऊद की 'चंदायन', अब्दुल कुद्दूस गंगोही कृत "रूहनामा", जायसी की "पद्मावती", कवि उसमान की "चित्रावली" आदि सभी में यह सौन्दर्य दृष्टि है । ये सूफी कवि सौन्दर्य की सीमा को ही नहीं स्पर्श करते बल्कि उसकी अन्तरात्मा में में प्रवेश करते हैं । और शाश्वत सौन्दर्य की अनुभूति कराने का प्रयास करते हैं । इसीलिए तो इनमें काव्य का सरस और प्रांजल देखा जाता है ।

इन कवियों की मूल भावनाओं को न पकड़ पाने के कारण इनके साथ कम अन्याय नहीं किया गया है । इन्हें इस्लाम का प्रचारक कहा गया है । और अनुदार होकर इसी प्रकार के अन्य आक्षेप लगाए गए हैं । इन प्रेमाख्यानों के पुनर्मूल्यांकन की आवश्यकता है । ये सूफी कवि निःसंदेह मुसलमान थे । इनके भीतर इस्लामी संस्कार और परम्परा सुरक्षित है । किन्तु केवल इसीलिए ये उपेक्षणीय नहीं हो सकते । सूफियों की दृष्टि सदैव मानवता वादी रही है । फारसी के प्रसिद्ध सूफी कवि सनाई ने कहा है ——" तुम्हें उन लोगों का साथ छोड़ देना चाहिए जो मंदिर और मस्जिद के झगड़े में पड़े हुए हैं।[1] एक और अन्य सूफी कवि का विचार है —— '' मैं इश्क का काफिर दीवाना हूँ, मुझे मुसलमान होने की आवश्यकता नहीं है और जो कहो कि तुम जनेऊ तो नहीं पहनते हो तो मेरी रग -रग में तार गया हुआ है । मुझे जनेऊ की दरकार नहीं है[2] ।"

सूफी मत सदैव आत्मा के शुद्धीकरण और प्रेम पर बल देता रहा है । भारत के समस्त सूफी कवियों ने भी ऐसा ही किया है । उन्होंने संकीर्णताओं से उठकर जीव को उदात्त बनाने का संदेश दिया । हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यानों में भी यह भावनाएँ मुखरित हुई हैं । अपनी निज की संकीर्णताओं में बँधकर सूफी प्रेमाख्यानों के अध्ययन से ठीक परिणाम नहीं मिले जा सकते ।

हिन्दी साहित्य में योग :- सूफी प्रेमाख्यानक हिन्दी साहित्य के इतिहास की एक

1- ईराक के सूफी कवि -सनाई- पृष्ठ 4।

2- हिन्दी पर फारसी का प्रभाव - पृष्ठ 73

मुख्य धारा है । इसमें सूफियों के सामान्य जीवन का उदात्त प्रेम, दाम्पत्य, सतीत्व और एक निष्ठा का निश्छल रूप सामने आया है । अतः इस विज्ञान के नए युग में भी जब कि जीवन में इतनी भाग दौड़ है, इतनी छीना झपटी है और हमारी मानवता को दबाकर पशुविकता उभरती जा रही है । हमें अपनी इन सांस्कृतिक उपलब्धियों की ओर दृष्टिपात करना पड़ेगा । जिसमें जीवन को सजाने, संवारने तथा हमारी मनोवृत्तियों का संस्कार करने की शक्ति है ।

हिन्दी साहित्य के विकास में सूफी कवियों का बहुत बड़ा योगदान है जिससे वे हमारे साहित्य - विधि के संचय में सराहनीय है ।

निष्कर्ष :- इस प्रकार परिशीलन के पश्चात् हमारा विचार है कि जिस्ती - परम्परा के उपरोक्त हिन्दी सूफी कवि हमारे हिन्दी साहित्य के सुनियोजित एवं कुशल कलाविद महाकाव्यकार हैं । उनकी स्मरणीय रचनाओं को हम तक पहुँचाने का समाश्रय काव्य को ही है । सभी सूफी जनता के कवि थे इस लिए साधारण जनता के कल्याणार्थ ही उन्होंने अपने विचार प्रकट किए । उन्हें सुशिक्षित या शासक वर्ग से धन या प्रशंसा प्राप्त नहीं करनी थी उनका लक्ष्य कविता करना भी न था वे तो हृदयोदधि में उत्पन्न हुए भावों एवं विचारों को जनता तक पहुँचाकर उन्हें जागरूक और चैतन्य बनाना चाहते थे । साधारण जनता को समझने समझाने के लिए प्रचलित लोक भाषा ही अधिक उपयोगी थी ।

आज जब हम उन लोगों के विषय में सोचते हैं तो हमारे सामने ऐसा व्यक्तित्व आता है जैसे वे मानव जाति के महान मुक्तिदाता थे । उन्होंने जनता के जीवन में ही अपने जीवन को खपा दिया था और उनके जीवन को समृद्ध तथा सम्पूर्ण बनाने का प्रयत्न किया था । उनका जीवन कितना निष्ठापूर्ण और जन सेवा की भावना से ओत प्रोत था। इसका अनुमान आप उनकी सुगन्ध वाणियों से लगा सकते हैं । सदा से उन सूफियों का त्याग हमारे धार्मिक जीवन का एक अंग रहा है । आज जो प्राणी विश्व में हैं इस बात को नहीं जानते कि हम उन थोड़े से सूफियों के कितने ऋणी हैं जिन्होंने अपनी प्रत्येक वस्तु की बाजी लगा दी ——— अपने नाम की अपनी सहनशक्ति की और अपनी गरदन की बाजी लगा दी और जिन्होंने वास्तव में अपने जीवन का बलिदान करके मूल्य चुकाया ताकि सत्य, सौन्दर्य और सौजन्य का आलोक विश्व को स्पर्श कर सके । वे महान सूफी आज नहीं है, परन्तु वे गुण जो उनके जीवन का अंग बन गए वे आज भी हमारे लिए प्रिय आदर्श हैं । हम में से

जिनको थोड़ा भी उन लोगों को जानने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है । लोगों को उपदेश देंगे कि वे अपने जीवन को उन महान सूफियों के ढाँचे में ढालने का प्रयत्न करें और वाक्यित के शब्दों में सुरमिलाकर कहेंगे " जाईए और ऐसा ही किजए "।

: पंचम अध्याय :

सहायक ग्रन्थों की सूची

क्रम सं0	ग्रन्थ का नाम	प्रकाशन का स्थान एवं वर्ष	लेखक
	अरबी के ग्रन्थ :-		
1-	कुरआन शरीफ	रामपुर	हिन्दी अनुवाद से दिया ग है ।
2-	किताब-अल-लुमा	लन्दन 1911	अल सर्राज
	फारसी के ग्रन्थ :-		
3-	कश्फुल महजूब	लाहौर 1923	हुजवेरी ।
4-	तबकातुस्सूफिया	काबुल	अब्दुल्लाह अन्सारी ।
5-	अलरिसालतुल कुशैरिया	मिश्र 1928	इमाम कुशैरी ।
6-	मुरूजुज्जहब	पेरिस	मसऊदी ।
7-	शिजरतुल अनवार		फखरूद्दीन देहलवी ।
8-	मामुकोमा		सै0 अलाउद्दीन औवबी ।
9-	सियरूल औलिया	देहली 1885	अमीर खुर्द ।
10-	नफहातुल अनस		अब्दुर्रहमान जामी ।
11-	अखबारूल अखयार	देहली 1914	अब्दुल हक मुहद्दिस देहलव
12-	किताब-उल-हिन्द		अलबेरूनी ।
13-	सियरूल आरिफीन	देहली 1893	जमाली ।
14-	किमियाए सआदत		इमाम गजाली ।
15	तुरफतुल्लुद्दुर	हस्तलिखित ए0एम0यू0	हुजवेरी ।
16-	खजानियतुल औलिया		अल सर्राज ।
17-	तारीखे फिरोज शाही	कलकत्ता 1860-62	जियाउद्दीन बर्नी ।
18-	फवाएदुल फुआद	बुलन्दशहर 1855-56	हसन निजामी ।
19-	ईरान के सूफी कवि		हकीम सनाई ।
20-	बेरूल मजालिस		हमीद कलन्दर
21-	मुनतखबुत्तवारीख भाग प्रथम	कलकत्ता 1865-69	मुल्ला अब्दुल कादिर बदायूँनी
22-	मकतूबाते शेख अब्दुल कुद्दूस गंगोही	हस्तलिखित ए0एम0यू0	
23-	मकतूबाते कुद्दूसिया		अब्दुल कुद्दूस गंगोही ।
24-	लतायफे कुद्दूसी		शेख रूकनुद्दीन ।
25	अब्दुल मकामात	लखनऊ 1885	मु0 हाशिम बदख्शानी
26-	सीरी खुसरो	ए0एम0यू0प्रेस	अमीर खुसरो ।
27-	मसनवी	हिन्दी लिपि	मौलाना रूम ।
	संस्कृत ग्रन्थ :-		
28-	अन्नपूर्ण उपनिषद		

क्रम सं०	ग्रन्थों का नाम	प्रकाशन का स्थान एवं वर्ष	लेखक
	हिन्दी के ग्रन्थ :		
29-	उत्तर भारत की सन्त परम्परा		डॉ० परशुराम चतुर्वेदी ।
30-	नाथ सम्प्रदाय		डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी
31-	इस्लाम के सूफी साधक	अनुवादक श्री नर्म देवरचतुर्वेदी	रेनाल्ड ए० निकल्सन ।
32-	जायसी के परवर्ती हिन्दी सूफी कवि और काव्य ।	लखनऊ 1956 ई०	डॉ० सरला शुक्ला ।
33-	श्री गुरु ग्रन्थ साहिब	अमृतसर 1951	शिरोमणि गुरुद्वारा कमेटी
34-	गासी द तासी (हिन्दी साहित्य का इतिहास)		अनुवाद लक्ष्मी सक्सेना वार्ष्णेय ।
35-	हिन्दी भाषा और साहित्य		बाबू श्याम सुन्दर दास ।
36-	संस्कृति के चार अध्याय		रामधारी सिंह दिनकर।
37-	हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास		डॉ० रामकुमार वर्मा ।
38-	आदि तुर्क कालीन भारत		सै० अतहर अब्बास रिजवी
39-	अमीर खुसरो सम्बन्धी व्याख्यान माला		डॉ० तारा चन्द्र
40-	अमीर खुसरो और उनकी हिन्दी शायरी		डॉ० मुजाअत अली सन्दीलवी
41-	प्राचीन आर्य भाषा और हिन्दी		डॉ० चाटुर्ज्या ।
42-	हिन्दी साहित्य का बृहत इतिहास (चतुर्थभाग)		पं० परशुराम चतुर्वेदी ।
43-	दक्खिन का पद्य और गद्य		डॉ० श्रीराम शर्मा ।
44-	सबरस		डॉ० श्रीराम शर्मा ।
45-	हिन्दी का विश्व कोश (खंड प्रथम)		काशी नागरी प्रचारिणी सभा
46-	अमीर खुसरो भावात्मक एकता के अग्रदूत		डॉ० मलिक मुहम्मद ।
47-	खिलजी कालीन भारत	1956	सै० अतहर अब्बास रिजवी
48-	हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास		अयोध्यासिंह उपाध्याय
49-	पदमावत	आगरा 1967	माता प्रसाद गुप्त ।
50-	पदमावत	बम्बई 1964	डॉ० परमेश्वरीलाल गुप्त ।
51-	कबीर का रहस्यवाद	प्रयाग 1932	डॉ० रामकुमार वर्मा ।
52-	अलखबानी	अलीगढ़ 1971	सै० अतहर अब्बास रिजवी एवं डॉ० सैयिद रिजवी
53-	गीता रहस्य अथवा कर्म योग शास्त्र	बम्बई 1956	बालगंगाधर तिलक ।
54-	सुन्दर ग्रन्थावली	राजस्थान रिसर्च सोसाइटी कलकत्ता	
55-	पद्मावत		डॉ० माता प्रसाद गुप्त
56-	जायसी ग्रन्थावली		डॉ० माता प्रसाद गुप्त
57-	जायसी ग्रन्थावली	सं० 2013	पं० रामचन्द्र शुक्ल
58-	मलिक मुहम्मद जायसी (प्रथम भाग)	प्रयाग 1947	डॉ० कलम श्रेष्ठ ।
59-	पदमावत प्राक्कथन		डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल
60-	चित्रावली		श्री जगमोहन वर्मा ।
61-	हिन्दी पर अरबी का प्रभाव		श्री अम्बिका प्रसाद वाजपेई

क्रम सं0	ग्रन्थों का नाम	प्रकाशन का स्थान एवं वर्ष	लेखक
	उर्दू के ग्रन्थ :-		
62-	हियाते खुसरो		मौलाना शिबली ।
63-	तारीखे मशायखे चिश्त		प्रो0खलीक अहमद निजामी
64-	उर्दू की इब्तदाई नस्रोनुमा में सूफियाए कराम के काम	1968	डा0मो0अब्दुल हक ।
65-	तज़्किरए निजामी		हसन सानी ।
66-	मलिक मुहम्मद जायसी	1941	सै0 कल्बे मुस्तफा ।
67-	मकालाते शिबली (भाग 1 व 2)	लखनऊ ।	मौलाना शिबली ।
68-	हिन्दी ज़बान और मुसलमानों का तबई मिलान		नूरूल हसन ।
69-	बंगला ग्रन्थ :-		
69-	इस्लामी बंगला साहित्य		श्री सुकुमार सेन ।
	अंग्रेजी के ग्रन्थ :-		
70-	सिलेक्शंज़ आफ मेडिवल इन्डियन कल्चर		
71-	गज़ेटियर आफ प्रोविंस आफ अवध (भाग प्रथम)	1858	
72-	पंजाबी सूफी पोयट्स		लाजवन्ती रामकृष्ण ।
73-	ए शार्ट हिस्ट्री आफ मुस्लिम रूल इन इंडिया		डा0ईश्वरी प्रसाद ।
74-	मोब्स और रिलेजस कल्चर		डा0शिवकुमार दास गुप्ता
75-	आईने अकबरी (प्रथम भाग)		बलाख मैन ।
76-	जर्नल आफ रिसर्च	बिहार विश्वविद्यालय	डा0रामखेलावन पाण्डे ।
77-	दी मुगल इम्पायर फ्रम अकबर टू औरंगज़ेब		सै0एस0एम0जाफर ।
78-	सुल्तानपुर प्रान्त का गज़ेटियर (भाग 36)	1903	
79-	अलगज़ाली दी मिस्टिक	लन्दन	मार्ग रेट स्मिथ ।
80-	सूफी-इज्म- इट्स सेन्ट्स एण्ड शाइन्स इन इन्डिया		जान0ए0सुभान ।
81-	सोसाईटी एण्ड कल्चर इन मुगल एज		डा0 पी0एन0चोपड़ा ।